गंगा-पुस्तकमाला का इक्यानवेवाँ पुष्प

पाली-प्रबोध

पं० आद्यादत्त ठाकुर

९१

पाली-प्रबोध

संपादक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
(सुधा-संपादक)

गंगा-पुस्तकमाला का इक्यानबेवाँ पुष्प

पाली-प्रबोध

लेखक

पं० [redacted]

(पाली, प्राकृत और संस्कृत के अध्यापक,

लखनऊ-विश्वविद्यालय)

प्रकाशक

गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

२९-३०, अमीनाबाद-पार्क

लखनऊ

प्रथमावृत्ति

सजिल्द १॥)] सं० १९८९ वि० [सादी १)

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

वक्तव्य

भारतवर्ष में 'पाली' के पठन-पाठन का पुनरुद्धार हो रहा है विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में तो 'पाली' पाठ्य-विषयों में से है ही; कलकत्ता-संस्कृत-बोर्ड की उच्चतम परीक्षाओं में भी 'पाली' प्रविष्ट हो चुकी है। यह संतोष की बात है। परंतु पाली-साहित्य की पुस्तकें देवनागरी-अक्षरों में अभी तक नहीं के बराबर हैं। व्याकरण पर तो नागरी-अक्षरों में अथवा हिंदी-भाषा में कोई पुस्तक है ही नहीं। पं० विधुशेखर भट्टाचार्यजी ने अपने पाली व्याकरण में उदाहरण अवश्य नागराक्षर में दिए हैं, परंतु नियम और लक्षण आदि की भाषा बँगला है, और अक्षर भी बँगला, जिससे बँगला न जाननेवाले छात्र उससे यथार्थ लाभ नहीं उठा सकते। हिंदी में इस अभाव की पूर्ति करने के लिये मेरे माननीय मित्र पंडित बदरीनाथजी भट्ट तथा सुहृद्वर श्रीयुत दुलारेलालजी भार्गव ने मुझसे आग्रह किया, परंतु अपनी अल्पज्ञता के कारण इतने बड़े महत्त्वपूर्ण कार्य में प्रवृत्त होने का मुझे साहस न हुआ। मुझे आशा थी कि और योग्यतर विद्वान् इस अभाव की पूर्ति करने में अवश्य ही अग्रसर होंगे। परंतु मेरी आशा पूर्ण नहीं हुई और अंत में मुझे ही यथाकथञ्चित् इसका संपादन करना पड़ा। व्याकरण में नए उदाहरण और नियम निकालना यथार्थ मौलिकता है, उसके लिये न मुझे अवकाश था और न साधन। मेरे लिये प्रधान पथ-प्रदर्शक हैं श्रीयुत विधुशेखर भट्टाचार्यजी। इनके पाली-प्रकाश ने मेरा मार्ग अत्यंत सरल कर दिया, और अधिकतर नियम और उदाहरण उसी में से लिए गए हैं। इसके लिये श्रीयुत भट्टाचार्यजी का मैं विशेषतः ऋणी हूँ। किसी-किसी प्रकरण

में म्यूलर और डुरोसील का क्रम मुझे कुछ अच्छा प्रतीत हुआ, वह उनकी पुस्तकों में से लिया गया है, और इस तरह इन तीनों पुस्तकों के आधार पर यह पुस्तक तैयार हुई है। संदिग्ध स्थलों में जर्मन-विद्वान् विंटरनिज़ के पाली-व्याकरण से साहाय्य मिला, और इसके लिये मेरे माननीय अध्यक्ष श्रीयुत सुब्रह्मण्य अय्यर महोदय धन्यवाद-भाजन हैं, जिन्होंने कृपा करके जर्मन-पुस्तक में देखकर मेरे संदेहों का निराकरण किया।

आद्यादत्त ठाकुर

विषय-सूची

पाठावली

पाली-प्रबोध

वर्ण-विभाग

वैदिक भाषा में ६४ अक्षर माने गए हैं। यह संख्या शनैः-शनैः कम होती गई। वर्तमान संस्कृत में ५० हो गई। पाली तक पहुँचते-पहुँचते वह संख्या और भी क्षीण हो गई।

स्वर—पाली में केवल आठ स्वर पाए जाते हैं। यथा—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए और ओ।

ऋकार के स्थान में कहीं अ, कहीं इ और कहीं उ होते हैं। उदाहरणार्थ ऋ के स्थान में अ का प्रयोग—गृहं = गहं; नृत्यं = नच्चं।

ऋ के स्थान में इ—ऋणम् = इणं; ऋषि = इसि; शृंग = सिंग।

ऋ के स्थान में उ—ऋतु = उतु; ऋषभ = उसभो।

लृकार का प्रयोग तो संस्कृत में ही बहुत विरल है, पाली में तो उसका सर्वथा अभाव है।

ऐ और औ भी पाली में नहीं पाए जाते।

ऐ के स्थान में प्रायः ए मिलता है। यथा—ऐरावण = एरावणो; वैमानिक = वेमानिक; वैयाकरण = वेय्याकरण।

कहीं-कहीं ऐ के स्थान में इकार तथा ईकार देखे जाते हैं। यथा—ग्रैवेयं = गीवेय्यं; सैंधवः = सिंधवो। औ के स्थान में अधिकतर ओ देखा जाता है। यथा—

औदरिकः = ओदरिकः; दौवारिकः = दोवारिको।

कहीं-कहीं उ भी देखा जाता है। यथा—मौक्तिकं = मुक्तिकं; औद्धत्यं = उद्धत्यं।

व्यंजन वर्ण

पाली में शकार तथा षकार का प्रयोग नहीं पाया जाता। इनके स्थान में केवल दंत्य सकार देखा जाता है।

साधारण विशेषताएँ जो पाली में पाई जाती हैं—

(१) पाली में पद के अंत में हल् (व्यंजन) नहीं मिलता। संस्कृत में जो पद हलंत होते हैं, उनके अंत हल् का पाली में लोप हो जाता है। यथा—विद्युत् = विज्जु; पश्चात् = पच्छा; समंतात् = समंता; गुणवान् = गुणवा।

(२) पाणिनीय व्याकरण के अनुसार पद के अंत में स्थित म् के स्थान में अनुस्वार नहीं होता, किंतु सारस्वत व्याकरण के अनुसार होता है।

पाली में अंत्य म् के स्थान में नित्य अनुस्वार होता है। यथा—

चित्तम् = चित्तं; तीर्थम् = तित्थं।

(३) पाली में विसर्ग का प्रयोग नहीं पाया जाता। संस्कृत के अकारांत पद के अंत में जो विसर्ग होता है, उसके स्थान में पाली में ओ होता है; अन्यत्र (अकारांत पद से भिन्न स्थल में) विसर्ग का प्रायः लोप होता है। यथा—

देवः = देवो; कः = को; एषः = एसो; भिक्षुः = भिक्खु; अग्निः = अग्गि; धेनुः = धेनु।

नोट—पद के मध्यस्थित विसर्ग के नियम भिन्न हैं। उनका यथा-स्थान उल्लेख होगा।

(४) पाली में रेफ का प्रयोग नहीं होता। संस्कृत के रेफ का पाली में प्रायः लोप हो जाता है और परवर्ण का प्रायः द्वित्व होता है। यथा—

कर्म = कम्म; सर्वः = सब्बो; निर्जलः = निज्जलो।

यदि रेफ हकार के ऊपर हो, तो दोनों के बीच में अकार आ जाता है और कहीं-कहीं इकार आ जाता है—

तर्हि = तरहि; महार्हः = महारहो; गर्हणम् = गरहणं; बर्हं = बरिहं; बर्ही = बरिही।

यदि रेफ यकार पर हो, तो रेफ सहित यकार के स्थान में प्रायः रिय होता है—अथच कहीं-कहीं उसका लोप देखा जाता है।

निर् उपसर्ग का रेफ यदि हकार पर हो, तो रेफ का लोप होता है और पूर्वस्थित नि का ह्रस्व इकार दीर्घ हो जाता है—

कार्यम् = करियं, कय्यं; आर्यः = अरियो; अय्यो। पर्यंकः = परियंको; कदर्यम् = कदरियं; भार्या = भरिया; सूर्यः = सुरियो; पर्यादानं = परियादानं; पर्यायः = परियायो।

निर्हरणम् = नीहरणं; निर्हतः = नीहतो।

पद के आदिवर्ण में स्थित रेफ का प्रायः लोप देखा जाता है। यथा—क्रीतः = कीतो; क्रुध्यति = कुज्झति; ग्रहणम् = गहणं; प्रेतः = पेतो।

पद के मध्यस्थित वर्ण के साथ यदि रेफ का संयोग हो, तो रेफ का लोप होता है और जिस वर्ण में रेफ का संयोग होता है, उसे द्वित्व होता है। यथा—

प्रक्रमः = पक्कमो; समग्रः = समग्गो।

अपवाद—

पद के मध्य अथवा अंत में एक से अधिक व्यंजन वर्ण के बाद रेफ आने से उसका केवल लोप होता है, द्वित्व कार्य नहीं होता। यथा—

इंद्रः = इंदो; अन्त्रम् = अन्तं।

संधि प्रकरण

स्वर संधि

(१) स्वर वर्ण से पर यदि तद्भिन्न स्वर वर्ण हो, तो कहीं-कहीं पूर्व स्वर का लोप होता है—

यस्स + इन्द्रियाणि = यस्सिन्द्रियाणि।

अज्ज + उपोसथो = अज्जुपोसथो।

महा + इच्छो = महिच्छो ।

महा + ओघो = महोघो ।

मे + अत्थि = मत्थि ।

उदधि + ऊमियो = उदधूमियो ।

अग्गि + आहितो = अग्गाहितो ।

भिक्खुनि + ओवादो = भिक्खुनोवादो ।

मनसि + इच्छति = मनसिच्छति ।

एसो + आवुसो = एसावुसो ।

(२) स्वर से पर तद्भिन्न स्वर आने से, कभी-कभी पर स्वर का लोप होता है । यथा—

चत्तारो + इमे = चत्तारोमे ।

चक्खु + इन्द्रियाणि = चक्खुद्रियाणि ।

ते + इमे = तेमे ।

ते + अपि = तेपि ।

सञ्ञा + इति = सञ्ञाति ।

छाया + इव = छायाव ।

अकतंजू + असि = अकतंजूसि । (अकृतज्ञोऽसि)

आकासे + इव = आकासेव ।

वसलो + इति = वसलोति ।

(३) पूर्व स्वर के लोप होने पर कभी-कभी पर स्वर (यदि ह्रस्व-हो तो) दीर्घ हो जाता है—

कम्म + उपनिस्सयो = कम्मूपनिस्सयो ।

सद्धा + इध = सद्धेध । (श्रद्धेह)

अप्पस्सुतो + अयं = अप्पस्सुतायं ।

दुक्खो + अयं = दुक्खायं ।

योपि + अयं = योपायं ।

सचे + अहं = सचाहं ।

तदा + उपसम्मत्ति = तदूपसम्मन्ति ।

(४) पर स्वर के लोप होने पर, कभी-कभी पूर्व स्वर (यदि ह्रस्व हो तो) दीर्घ हो जाता है—

सु + इध = सूध (स्विह)

साधु + इति = साधूति ।

लोकस्स + इति = लोकस्साति ।

देव + इति = देवाति ।

वि + अतिमानेति = वीतिमानेति ।

किंसु + इधवित्तं = किंसूधवित्तं ।

वि + अति सारेति = वीतिसारेति ।

विज्जु + इव = विज्जूव ।

निम्न स्थलों में दीर्घकार्य नहीं होता—

इति + अस्स = इतिस्स, यस्स + इदानि = यस्सदानि ।

(५) अवर्ण, इवर्ण अथवा उवर्ण से पर सवर्ण स्वर आने से, संस्कृत के सदृश, दोनों मिलकर सवर्ण दीर्घ होता है—

ञाण × आलोकेन = ञाणालोकेन ।

देमि + इति = देमीति ।

बुद्ध + अनुस्सति = बुद्धानुस्सति ।

सम्मन्ति + इध = सम्मन्तीध ।

बहु + उपकारं = बहूपकारं ।

(६) अकार अथवा आकार से पर इकार आने से एकार और उकार आने से ओकार होता है—

अव + इच्च = अवेच्च ।

उप + इतो = उपेतो ।

मुख + उदकं = मुखोदकं ।

चंद + उदयं = चंदोदयं ।

(७) इकार से पर असवर्ण स्वर रहने से इकार के स्थान में प्रायः यकार होता है—

वि + आकतो = व्याकतो ।

अग्गि + आगार = अग्ग्यागार ।

अपवाद—

गच्छामि + अहं = गच्छामहं ।

ऐसी ही स्थिति में इकार के स्थान में कभी-कभी इय् होता है—

अग्गि + आगारे = अग्गियागारे ।

पंचमी + अत्थे = पंचमियत्थे ।

परि + एसना = परियेसना ।

(८) ओकार अथवा उकार से पर असवर्ण स्वर रहने से ओकार और उकार के स्थान में कभी-कभी व होता है—

को + अत्थो = क्वत्थो ।

यो + अयं = य्वायं ।

सो + अस्स = स्वास्स ।

यतो + अधिकरणं = यत्वाधिकरणं ।

अथखो+अस्स = अथ ख्वस्स ।

दु+आकारो = द्वाकारो ।

वत्थु+एव = वत्थ्वेव ।

सु+आगतं = स्वागतं ।

अनु+एति = अन्वेति ।

नतु+एव = नत्वेव ।

उकार से पर असवर्ण स्वर रहने से कभी-कभी उकार के स्थान में उव् होता है—

पुथु+आसने = पुथुवासने ।

(९) एकार से पर स्वर वर्ण (प्रायः अकार) रहने से कभी-कभी एकार का लोप हो जाता है,और परवर्ती ह्रस्व अकार दीर्घ हो जाता है—

मे+अयं = म्यायं; ते + अहं = त्याहं ; पब्बते + अहं = पब्बत्याहं ।

(१०) दीर्घ स्वर से पर एव होने से कभी-कभी एव के एकार के स्थान में विकल्प से 'रि' आदेश होता है, और पूर्वस्थित दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है—

यथा + एव = यथरिव, यथेव ।

तथा + एव = तथरिव, तथेव ।

कभी-कभी ह्रस्व स्वर से पर इव अथवा एव आने से उसे रेफ का आगम होता है—

विज्जु + इव = विज्जुरिव । सब्भि + एव = सब्भिरेव ।

(११) कभी-कभी केवल उच्चारण सौकर्य के लिये या कभी-कभी छंद के अनुरोध से व्यंजन वर्ण से पूर्व स्थितह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है—

सम्म + धम्मो = सम्माधम्मो । (सम्यग्धर्मः)

मुनि + चरे = मुनीचरे ।

खंति+परमं = खंतीपरमं ।

जायति+सोको = जायतीसोको ।

(१२) साधारणतः इदं शब्द तथा एव शब्द पर में रहने से उच्चारण सौकर्य के लिये मध्य में यकार का आगम होता है—

मा+इदं = मयिदं ; न+इदं = नयिदं ; न + इमानि = नयिमानि ।

नव+इमे = नवयिमे ; न + एव = नयेव ।

तेसु + एव = तेसुयेव; सो + एव = सोयेव ।

(१३) कभी-कभी स्वर वर्ण पर में रहने से पूर्ववर्ती स्वर को मकार का आगम होता है—

लघु + एस्सत्ति = लघुमेस्सत्ति ।

कसा + इव = कसामिव ।

गिरि + इव = गिरिमिव ।

येन + इध = येनमिध ।

आकासे + अभि-पूजयि = आकासेमभिपूजयि ।

(१४) कभी-कभी इसी तरह दो स्वरों के बीच में उच्चारण सौकर्य के लिये नकार का आगम होता है—

चिरं + आयति = चिरंनायति ।

इतो + आयति = इतोनायति ।

अविज्जा + अहोसि = अविज्जा नाहोसि ।

(१५) कभी-कभी ऐसे ही स्थलों में दकार का आगम होता है—

सम्मा + अत्थो = सम्मदत्थो ।

(१६) वृत्त के अनुरोध से तथा उच्चारण-सुविधा के लिये कभी-कभी पूर्ववर्ती अनुस्वार का लोप होता है—

एवं + अहं = एवाहं ; कथं + अहं = कथाहं ।

बुद्धानं + सासनं = बुद्धानसासनं ।

(१७) कभी-कभी अनुस्वार से पर स्थित स्वर का लोप होता है—

अभिनंदुं + इति = अभिनंदुंति ।

कतं + इति = कतंति । (कृतमिति)

किं + इति = किंति ।

बीजं + इव = बीजंव ।

इदं + अपि = इदंपि ।

दातुं + अपि = दातुंपि ।

किं + इदानि = किंदानि ।

विकल्प से किमिति आदि प्रयोग भी उपलब्ध होते हैं ।

व्यंजन संधि

स्वरांत पद से पर हलादि पद आने से भी कभी-कभी छंद के अनुरोध से पूर्वस्थित स्वर में विकार होता है—

(१) कभी-कभी व्यंजनादि पद से पूर्व स्थित दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है। यथा—

यथा + भावी + गुणेन = यथभाविगुणेन।

यिट्ठं वा हुतं वा लोके + यिट्ठं व हुतं व लोके (इष्टं वा हुतं वा लोके)

(२) कभी-कभी पूर्वस्थित ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है—
एवं गामे मुनि चरे = एवं गामे मुनी चरे।

सु + रक्खं = सूरक्खं।

(३) स्वरांत पद अथवा निपात से परवर्ती व्यंजन को कभी-कभी द्वित्व होता है—

इध + पमादो = इधप्पमादो।

सु + पट्ठितो = सुप्पट्ठितो।

वि + पयुत्तो = विप्पयुत्तो।

अ + पतिवत्तियो = अप्पतिवत्तियो।

प + कमो = पक्कमो।

यथा + कमं = यथक्कमं।

वि + जोतति = विज्जोतति।

कत + ञु = कतंञु।

दु + लभो = दुल्लभो।

दु + सीलो = दुस्सीलो।

नोट—इन उदाहरणों से प्रकट होगा कि पूर्व में, संस्कृत में, जो संयुक्त अक्षर थे, पाली में आकर उनमें से एक (प्रायः रेफ) का लोप हो गया था। उपसर्गादि के वश से उनमें द्वित्व होकर उनका परिमाण फिर पूर्ववत् हो गया।

यथा इध पमादो में प्रमाद (सं०) के स्थान में पमाद हुआ था। अब इध के संपर्क से पकार को द्वित्व होने से रेफ की

क्षति की पूर्ति हो गई । इसी प्रकार अन्य पदों को समझना चाहिए ।

उ, उप, परि, नि, दु इत्यादि उपसर्गों से पर व्यंजन को प्रायः द्वित्व होता है।

द्वित्व प्रकरण में वकार के स्थान में बकार होता है, तथा महाप्राण (वर्ग के द्वितीय तथा चतुर्थ) अक्षरों के स्थान में उनके अल्पप्राण (प्रथम तथा तृतीय) अक्षर होते हैं—

नि + वानं = निब्बानं । नि + वायति = निब्बायति ।

दु + विनिच्छयो = दुब्बिनिच्छयो ।

पाली शब्दों के स्वरूप और उनका संस्कृत से संबंध

पाली भाषा संस्कृत से ही निकली है, अथवा उससे स्वतंत्र है, इस विषय में विद्वज्जनों में मतभेद है । प्राचीन परिपाटी के पोषक पंडितप्रवर पाली की जननी संस्कृत को ही मानते हैं । इनके मत में जिस प्रकार अन्य प्राकृत संस्कृत से निकलीं, उसी तरह पाली भी प्राकृत के एक भेद में से है, और वह सर्वथा संस्कृत से ही प्रसूत है । इसके विपरीत कुछ आधुनिक पंडितों की यह धारणा है कि संस्कृत और पाली सर्वथा स्वतंत्र हैं, उनमें जनक जन्य संबंध नहीं है । दोनों पृथक्-पृथक् हैं । वे दोनों ही किसी एक साधारण स्रोत से भले ही प्रादुर्भूत हों, और इस तरह एक दूसरे की बहनें चाहे हो सकती हैं, पर जननी और जन्या का संबंध कदापि स्वीकृत नहीं हो सकता । इन दोनों मतों में से कौन कितने महत्त्व का है, इसके विवेचन का यह स्थल नहीं । जो लोग पाली को संस्कृत से निकली हुई मानते हैं, उनका संस्कृत और पाली के रूपों में भेद प्रदर्शन करना, अथच उसके साधारण नियमों का उल्लेख करना उचित ही है, परंतु जो लोग पाली और संस्कृत को सर्वथा भिन्न मानते हैं, उन्होंने भी—ज्ञानतः

अथवा अज्ञानतः, तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की दृष्टि से ही अथवा और किसी कारण से—संस्कृत को ही मूल मानकर पाली रूपों में विकार होने के नियमों का उल्लेख किया है। प्रायः सभी पाली वैयाकरणों ने संस्कृत से पाली में परिवर्तन होने के ही नियमों का उल्लेख किया है। चाहे उनके मत में संस्कृत से पाली प्रादुर्भूत हो या न हो। यहाँ भी उसी सिद्धांत के अनुसार, विवादग्रस्त विषय की विवेचना किए बिना ही, संस्कृत को मूल मानकर पाली और संस्कृत में क्या-क्या अंतर हैं उनका साधारणतः उल्लेख किया जाता है। यहाँ यह लिख देना भी अत्यंत आवश्यक है कि संस्कृत से पाली में परिवर्तन होने के जो नियम दिए गए हैं, वे सार्वत्रिक कदापि नहीं हैं—प्रायिक हैं और उनके अपवाद रूप अनेक उदाहरण मिलते हैं; केवल सामान्य नियमों का यहाँ उल्लेख है; विवादग्रस्त नियम छोड़ दिए गए हैं।

(१) संस्कृत के ह्रस्व अकार के स्थान में भिन्न-भिन्न स्थलों में भिन्न-भिन्न प्रकार के परिवर्तन देखे जाते हैं। यथा—

(अ) कभी-कभी अकार के स्थान में ए होता है। यह परवर्ती संयुक्त अक्षर के कारण होता है, यह ध्यान देने योग्य है। यथा—

एत्थ—अत्र।

उभयेत्थ—उभयत्र।

हेट्ठा—अधस्तात्।

(आ) कभी-कभी अ के स्थान में इ देखा जाता है। यथा—

तिपु—त्रपु—(सीसा).

कलिंभक—कदंब।

पिलाल—पलाल। (धान का पयाल)

तिमिस—तमस्—अंधकार।

तिमिस्सा—तमिस्रा।

(इ) कभी-कभी अ के स्थान में उ होता है, यह विशेष करके उस स्थल में देखा जाता है, जहाँ उससे पूर्व अथवा पर में (कभी-कभी कुछ दूर भी) पवर्ग का कोई अक्षर रहता है।

सम्मुंजनी, सम्मुज्जनी—सम्मार्जनी—झाड़ू।

निब्बुसितत्ता—निरवसितात्मा।

निमुज्जति—निमज्जति।

पुथुज्जन—पृथग्जन—साधारण श्रेणी का जन।

पण्णुवीसति—पंचविंशति।

पवर्ग का प्रभाव जहाँ नहीं रहता है, ऐसे स्थल भी मिलते हैं, यथा—थुनंति—स्तनंति।

अज्जुक—अर्जक।

आगु—आगस्। (अपराध)

पंजुण्ण—पर्जन्य। (मेघ)

सज्जु—सद्यः।

उसूया—असूया।

(ई) कहीं-कहीं अ के स्थान में ओ भी मिलता है—

संमोस—संमर्श।

अंतो—अंतर।

तिरोक्ख—तिरस्क।

(२) संस्कृत के इकार के स्थान में—

(अ) कभी-कभी अ होता है—

काकणिका—काकिणिका—कौड़ी।

पठवी—पृथिवी।

पोक्खरणी—पुष्करिणी।

घरणी—गृहिणी।

(आ) कभी-कभी ए होता है—

एत्त—इयत्। (इतना)

विहेसा—विहिंसा।

वेहागमन—विहायोगमन। (विहायस = आकाश,)

वेमतिक—विमतिक।

वेमज्झ— विमध्य।

मंजेट्ठा—मंजिष्ठा। (मजीठ)

माता पेत्तिभर—मातापितृभरः।

एट्ठि— इष्टि। (यज्ञ अथवा इच्छा)

(इ) कभी-कभी उ होता है—

कुक्कु—किष्कु—एक प्रकार की नाप लंबाई की।

निच्छुभियति —निच्छुभति—निच्छूभति—निःचीवति।

राजुल—राजिल।

गेरुक —गैरिक।

(३) ईकार के स्थान में—

(अ) अकार—भस्म —भीष्म। (भयंकर)

(आ) आकार—तिरच्छान—तिरश्चीन।

(इ) एकार—एरेति—ईरयति।

(ई) उकार—ठुभ-ष्ठीव।

निट्ठुहति, निट्ठुभति—निष्ठीवति।

(४) उकार के स्थान में—

(अ) अकार—सक्खलि—शष्कुलि।

अगरु, अगलु—अगुरु।

दुद्रभि —दुंदुभि।

वाकरा, वाकर—वागुरा। (जाल)

फल्लति—फुल्लति।

फरति—स्फुरति।

(आ) इ—मुदिता—मृदुता ।

सिप्पी—शुक्ति ।

(इ) कभी-कभी विशेष करके संयुक्त अक्षर से पूर्व—ओकार होता है । यथा—

ओक्का—उल्का ।

पामोक्ख—प्रमुख्य ।

कहीं-कहीं संयुक्त अक्षर पर में न रहने पर भी ओकार होता है—

कोलंज—कुंलज ।

अनोपम—अनुपम ।

(४) एकार के स्थान में—

(अ) अकार—

मिलक्ख—म्लेच्छ ।

(आ) आ—कायूर—केयूर ।

(इ) संयुक्त अक्षर से पूर्व—इकार देखा जाता है ।

पसिब्बक—प्रसेवक । (थैली)

पटिविस्सक—प्रतिवेशक । (पड़ोसी)

उब्बिल्ल—उद्वेल ।

(ई) कहीं-कहीं आकार भी देखा जाता है ।

मंकती—मत्कृते ।

अतिप्पगे—अतिप्रगे—(अत्यंत सबेरे)

(६) संस्कृत के ओकार के स्थान में संयुक्त अक्षर से पूर्व ह्रस्व उकार और असंयुक्त से पूर्व दीर्घ उकार होता है । यथा—

जुण्हा—ज्योत्स्ना (चाँदनी) ।

तुत्त—तोत्र (अंकुश) ।

विसूक—विशोक ।

दूभ—द्रोह ।

खज्जूपनक—खद्योतनक। (जुगनूकीड़ा)

आरूग्य (आरोग्य) यहाँ संयुक्त से पूर्व भी दीर्घ उकार है।

संयुक्त अक्षर से पूर्व यदि दीर्घ स्वर हो, तो वह प्रायः ह्रस्व हो जाता है, इसमें सिद्धांत यह माना जाता है कि ह्रस्व के बाद संयुक्त अक्षर आने से संयोगे 'गुरु' के सिद्धांत के अनुसार 'गुरु' वह रहता ही है। तब यथार्थ में, ह्रस्व हो जाने पर भी, उसके परिमाण में कोई अंतर नहीं पड़ता। प्रत्युत ह्रस्व होने से उच्चारण में कुछ सौकर्य हो जाता है। किंतु पुरानी लिखित पुस्तकों में यह नियम सर्वत्र नहीं देख जाता। कहीं तो दीर्घ के स्थान में दीर्घ ही लिखा गया है, कहीं ह्रस्व कर दिया गया है। इसके ठीक विपरीत कहीं-कहीं संयुक्त से पूर्व दीर्घ स्वर को ह्रस्व न करके संयुक्त अक्षर में से ही एक का लोप कर दिया जाता है। दोनों के उदाहरण नीचे दिए जाते हैं—

अज्जवं—आर्जवम्। कोई-कोई आजवं लिखते हैं।

दव्वी—दार्वी।

कुछ लोगों का मत है कि दीर्घ स्वर वहीं रखना चाहिए, जहाँ संधि होकर दीर्घ स्वर आया हो। अन्य स्थलों में दीर्घ को ह्रस्व कर देना चाहिए। यथा—नाग्घति—न + आग्घति = नाग्घति यहाँ दो अकार की संधि के कारण दीर्घ हुआ है, इसमें ह्रस्व नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार—पियाप्पिय में ह्रस्व न होना चाहिए। क्योंकि यह भी संधिजन्य दीर्घ है। यथा—पिय + अप्पिय = पियाप्पिय।

वर्ग के पंचम अक्षर के साथ संयोग रहने पर उससे पूर्ववर्ती दीर्घ के स्थान में प्रायः ह्रस्व हो जाता है। यथा—

संत—शांत। दंत—दांत। वंत—वांत। परंतु इसमें भी कहीं-कहीं व्यतिक्रम मिलता है। यथा—लांगन किच्च (लांगलकृत्य) यहाँ ल में ह्रस्व अकार होना चाहिए था।

दूसरे प्रकार के संयुक्त अक्षरों में यह नियम अत्यंत शिथिल है। कहीं दीर्घ मिलता है। यथा—अतिवाक्य—

कहीं-कहीं ह्रस्व मिलता है। यथा—सक्य, सक्क सकिय = शाक्य। दुस्सील्य (दौःशील्य); ञत्वा (ज्ञात्वा); भित्वा (भीत्वा)। कहीं-कहीं दोनों मिलते हैं—आख्यात, अक्खात, पहत्वान, पहात्वान— (प्रहाय) बल्य, बाल्य; कम्यता—काम्यता; बह्य—बाह्य।

संयुक्त अक्षर के साथ दीर्घ स्वर की अड़चन को दूर करने के लिये जहाँ संयुक्त अक्षर में से एक का लोप हो जाता है, उसके उदाहरण ये हैं—

आजव—आर्जव।

ऊमि—ऊर्मि। कहीं-कहीं उम्मि भी मिलता है।

भाणक—भांडक।

भूज—भूर्ज।

अहासि—अहार्षीत्।

इसी प्रकार कहीं-कहीं ह्रस्व से पर संयुक्त अक्षर रहने पर संयुक्त अक्षर में से एक का लोप हो जाता है, और पूर्व स्थित ह्रस्व दीर्घ हो जाता है। यथा—

सजीव—सज्जीव (सद् + जीव)।

वूपकासति—व्युपकर्षति।

स्वासन—श्वस्तन। (आगामिदिन होनेवाला)

वाक—वल्क।

संकापयति—संकल्पयति।

उत् उपसर्ग के द् का प्रायः लोप होकर उकार दीर्घ हो जाता है

यथा—ऊहसन + उत्—हसन।

ऊहंजजइ—उद्‌धन्यते।

ऊहत + उद्धत।

इस नियम से ठीक विपरीत यह भी देखा जाता है कि कहीं-कहीं संयुक्त अक्षर से पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है। कभी-कभी तो संयुक्त अक्षर पर में न रहने पर भी दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है।

बहुन्नं—बहूनाम्। पितुन्नं—पितृणाम्।

तिण्णं। पंचन्नं। भुम्मि—भूमि।

मत्तिसंभव—मातृसंभव।

मातुमत्तिक—मातृमातृक।

उण्हिस्स—उष्णीष।

निड्ढ—नीड।

सुत्त—स्यूत।

जन्नु—जानु।

एकार और ओकार जब संयुक्त अक्षर से पूर्व आते हैं, तब उनका उच्चारण ह्रस्व के समान होता है। यथा सेय्या।

एकार के बाद यकार को द्वित्व होता है और एकार का उच्चारण ह्रस्व हो जाता है—सेय्यो—श्रेयः। मच्चुधेय्य—मृत्युधेय। केयूर में द्वित्व नहीं होता। यहाँ एकार के स्थान में आकार हो जाता है। यथा—कायूर—केयूर।

इसी प्रकार ओकार से परे वकार को द्वित्व होता है और ओकार का उच्चारण ह्रस्व होता है—योब्बन—यौवन। अब्बोच्छिन्न—अव्यवच्छिन्न। ओक्खित्त—अवक्षिप्त।

आकारांत धातु—ज्ञा, दा, स्था प्रभृति से जो रूप बनते हैं, उनमें इन धातुओं का आकार ह्रस्व हो जाता है—

पञ्जवा—प्रज्ञावत्।

पट्ठपेति—प्रस्थापयति।

संखत—संख्यात। ('संस्कृत' से भी संखत बनता है)। धातु के मध्य में स्थित आकार भी प्रायः ह्रस्व हो जाता है—

गह्हति, गह्हेति—गाहते ।

उपसर्गस्थ ह्रस्व स्वर प्रायः दीर्घ हो जाता है । यथा—

पाटिभोग—प्रतिभोग ।

पावचन—प्रवचन ।

पाकट—प्रकट ।

पाहेति—प्रहिणोति ।

परतु कहीं उपसर्ग से अतिरिक्त स्थलों में भी अकार के स्थान में दीर्घ आकार देखा जाता है—

आलिंद—अलिंद (आंगन) ।

आजिर—अजिर ।

पायास—पायस (खीर) ।

गाव्यूत—गव्यूति ।

उम्मार—उदुंबर, द्वारदेश ।

फलाफल—फलफल ।

खण्डाखण्डं—खण्डखण्डम् ।

जैसा कि पहले लिखा गया है म् के स्थान में, पदांत में, अनुस्वार होता है । परंतु पद के मध्य में अनुस्वार भी होता है और विकल्प से परस्थित वर्ण का पंचम वर्ण उसके स्थान में होता है । कुङ्कुम और कुंकुम ; सङ्क्रान्ति और संक्रांति ; सण्डास और संडास आदि दोनों ही प्रकार के प्रयोग पाए जाते हैं ।

जकार से पूर्व या तो अनुस्वार ही बना रहता है अथवा अनुस्वार और जकार, दोनों ही के स्थान में ञ्ज हो जाता है । यथा—संयोग अथवा सञ्जोग ।

हकार का संयोग जब वर्ग के पंचम अक्षर से होता है, तब प्रायः दोनों में स्थानविनिमय हो जाता है । चिन्ह—सं० चिह्न ; पुब्बन्ह—सं० पूर्वाह्न ; मज्झन्ह—सं० मध्याह्न ।

कभी-कभी अनुस्वार सहित ह्रस्व स्वर में अनुस्वार का लोप हो जाता है और ह्रस्व स्वर को दीर्घ हो जाता है—

सीह—सिंह ; वीसति—विंशति ; सण्डास—संदंश ; दाठा—दंष्ट्रा । यह नियम सम् उपसर्ग में अधिकतर देखा जाता है, विशेष करके जब उसके बाद रेफ आता है। यथा—साराग—संराग; सारंभ—संरंभ ; सारंभी—संरंभी ।

इससे ठीक विपरीत, कभी-कभी दीर्घ स्वर के स्थान में ह्रस्व होता है और परिमाण पूरा करने के लिये ह्रस्व में अनुस्वार हो जाता है। यथा—नंग—नाग (सर्प) ।

सनंतन—सनातन; पिंज—पिच्छ (पूँछ) ।

सम्मुञ्जनी—सम्मार्जनी (झाड़ू); संवरी—शर्वरी । इन दोनों उदाहरणों में रेफ का लोप भी हुआ है ।

कभी-कभी ह्रस्व स्वर में भी अनुस्वार आ जाता है । यथा—

महिंस—महिष; दण्ढ—दृढ ।

मङ्कते—मत्कृते (मेरे लिये) ।

मङ्कुल—मत्कुण (खटमल) ।

अंच—अर्च (पूजा करना) ।

सिंगाल—श्रृगाल ।

कभी-कभी पद के अंत में अनुस्वार अथवा नकार जोड़ दिया जाता है—

सक्कच्चं—सत्कृत्य ।

कुदाचनं—कदाचन ।

अञ्ञदत्थुं—अन्यदस्तु ।

तत्थंच—तत्र च ।

नकार का उदाहरण—चिरन्नायति ।

कभी-कभी समास के पूर्व अवयव में अनुस्वार आगम हो जाता है—

अतलस्फस्स—अतलस्पर्श ।

सब्बञ्जह—सर्वजह ।

अन्धन्तम—अन्धतमस् ।

कभी-कभी पद-मध्यस्थित स्वर का लोप हो जाता है। यथा—

अग्ग—सं० अगार। यहाँ रेफ के स्थान में ग हुआ है और बीचवाले आकार का लोप हुआ है। धीता—सं० दुहिता। यहाँ द के उकार का लोप हुआ है और द और ह मिलकर ध हो गया है; फिर इकार दीर्घ हो गया है। पुरानी हिंदी में भी पुत्री के लिये धिया शब्द मिलता है ।

पद के आदि में कभी-कभी स्वर लुप्त हो जाता है। यथा—

लङ्कार—सं० अलङ्कार; नुमति—सं० अनुमति ।

परज्झति—अपराध्यति ।

पवन—उपवन ।

संस्कृत में भी अव और अपि के अकार का लोप, भागुरि आचार्य के मत से, माना गया है। उसी का यह और अधिकता से विकास ज्ञात होता है। इति का भी प्रायः ति रह जाता है। इव का व रह जाता है। इसका उल्लेख संधि-प्रकरण में है। पद के आदि में स्वर जोड़ने का उदाहरण है—इत्थी (स्त्रीः)। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है । उच्चारण में सौकर्य होना ही इसका मुख्य हेतु है।

कहीं-कही पद के बीच में भी स्वर आ जाते हैं।

किलेस—सं० क्लेश ।

आचरिय—आचार्य ।

हियो या हिय्यो—ह्यः ।

अरहति—अर्हति ।

हरद—ह्रद ।

सिरी—श्रीः।

हिरी—ह्री।

पिलवति—प्लवति।

व्यंजन परिवर्तन

Guttural—संस्कृत के कवर्ग के स्थान में, पाली में परिवर्तन होने पर, प्रायः चवर्ग होता है। यथा—

चुण्ड—कुण्ड।

Patatals—संस्कृत के चवर्ग के स्थान में पाली में कवर्ग होता है। यथा—भिसक्क—सं० भिषज।

मिलक्ख—म्लेच्छ।

पभंगून—प्रभञ्जन (वायु)।

कभी-कभी अक्षरों में परस्पर परिवर्तन होते देखे गए हैं। यथा—

(१) ध के स्थान में ह—रुहिरो—सं० रुधिर।

(२) त के स्थान में द—सुगदो—सं० सुगतः।

ग

(३) त के स्थान में ट—पहटो—सं० प्रहृतः।

(४) ग के स्थान में क।

(५) र के स्थान में ल—पलिपन्नो—परिपन्न।

(६) य के स्थान में ज—गवजो—सं० गवयः।

(७) ज के स्थान में य—नियग्पुत्तं—सं० निजग्पुत्रम्।

(८) त के स्थान में क—नियको—नियत।

Assimilation—Progressive and Regressive.

कभी-कभी जब दो व्यंजनों का संयोग रहता है, पूर्व अक्षर को पररूप हो जाता है, अर्थात् पूर्व अक्षर अपने पर के अक्षर में परिवर्तित हो जाता है। पाली में इस प्रकार पररूपवाला प्रयोग प्रचुरता से पाया जाता है।

(१) जब किसी स्पर्श वर्ण का (क से लेकर म पर्यंत वर्ण स्पर्श कहलाते हैं), तो पूर्व वर्ण को पर रूप होता है—

सक् + त = सत्त ।

सक् + थि = सत्थि ।

तप् + त = तत्त ।

उद् + कम्पेत्ति = उक्कम्पेति ।

तद् + करो = तक्करो ।

उद् + गच्छति = उग्गच्छति ।

भुज् + त = भुत्त ।

मुच् + त = मुत्त ।

उद् + चिनति = उच्चिनति ।

उद् + छेदी = उच्छेदी ।

उद् + जल—उज्जल ।

उद् + झायति—उज्झायति ।

नोट—यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि ये परिवर्तन प्रायः संस्कृत की संधि के अनुसार ही हुए हैं ।

उद् + गण्हाति = उग्गण्हाति ।

उद् + खिपति = उक्खिपति ।

उद् + छिन्दति = उच्छिन्दसि ।

उद् + तिण्ण = उत्तिण्ण ।

उद् + लोकेति = उल्लोकेति ।

तद् + पुरिस = तप्पुरिस ।

(२) कहीं-कहीं दो व्यंजनों के योग होने पर परव्यंजन को पूर्व रूप होता है, अर्थात् पर व्यंजन के स्थान में पूर्व वर्ण हो जाता है—

पाप् + नोति = पप्पोति ।

कुट्ट + त = कुट्ठ ।

रुध + त = रुद्ध ।

लभ + त = लद्ध ।

नोट—यहाँ भी संधि होने से रुद्ध, लद्ध आदि रूप होते हैं ।

(३) कभी-कभी तालव्य अक्षर के बाद दंत्य अक्षर के प्रथम चार वर्णों में से कोई आता है, तो दोनों वर्ण मूर्धन्य वर्ण में परिणत हो जाते हैं । यथा—

मज् + त = मट्ठ या मट्ट ।

पुच्छ् + त = पुट्ठ ।

इच्छ् + त = इट्ठ ।

पद के अंत में म के स्थान में न हो जाता है, यदि उसके बाद तकार हो तो । यथा—

गम् + त्वा = गन्त्वा ।

पद के आदि में म रहने से उससे पूर्ववर्ती दंत्य अक्षर के स्थान में भी म हो जाता है—

उद् + मग्ग = उन्मग्ग ।

य

य के स्थान में प्रायः उसका पूर्ववर्ती अक्षर हो जाता है । विशेष करके कर्मवाच्य क्रिया के यकार के स्थान में यह पूर्व रूप अधिकतर देखा जाता है—

गम् + य = गम्म ।

पच् + य = पच्च ।

मज् + य = मज्ज ।

भण् + य = भण्ण ।

दिव् + य = दिब्ब ।

खाद् + य = खज्ज (द के स्थान में ज होता है)।

खन् + य = खञ्ज।

समास के अंतर्गत य (जो संधि होकर इ के स्थान में होता है) पूर्ववर्ती अक्षर में परिणत हो जाता है। यथा—

पल्लङ्को—पल्यङ्क (पलि + अङ्क)।

विपल्लासो—विपर्यासः।

अप्पेकच्च—अप्येकत्र।

अब्भुग्गच्छति—अभ्युद्गच्छति।

त्य के स्थान च्च होता है। त्य के अंत का स्वर अविकृत रहता है—

अच्चन्तं—अत्यन्तम्।

पच्चयो—प्रत्ययः।

पच्चेति—प्रत्येति (विश्वास करता है)।

इच्चस्स—इत्यस्य।

इच्चादि—इत्यादि।

जच्चन्धो—जात्यन्धः।

सच्च—सत्य।

ध्य के स्थान में ज्झ होता है—

अज्झगमो—अध्यगमः।

अज्झोगाहित्वा—अध्यवगाह्य।

नोट—यहाँ पाली में अधि उपसर्ग रहने पर भी क्त्वा के स्थान में ल्यप् नहीं हुआ है। यह विषय ल्यप् के प्रकरण में देखना चाहिए।

अज्झुपगतो—अध्युपगतः।

अज्झेति—अध्येति।

द्य के स्थान में ज्ज होता है—

नज्जा—नद्या।

यज्जेवं—यद्येवम्।

मज्ज—मद्य ।

थ्य के स्थान में च्छ होता है—

तच्छ—तथ्य ।

रच्छा—रथ्या ।

व्य के स्थान में ब्ब होता है (पद के मध्य में ही)—

दिब्ब—दिव्य ।

पद के आदि में व्य रहने से वकार के स्थान में तो बकार हो जाता है, परंतु यकार में परिवर्तन नहीं होता—

ब्याकरणं—व्याकरणम् ।

ब्यञ्जनं—व्यञ्जनम् ।

स के बाद यकार आने से य के स्थान में स हो जाता है ।

पस्स—पश्य । यहाँ पहले तालव्य के स्थान में दंत्य सकार हो जाता है ।

पाली में हकार और यकार के स्थान-परिवर्तन का उदाहरण बहुत अधिकता से मिलता है । जहाँ-जहाँ ह्य होता है, वहाँ-वहाँ य्ह हो जाता है अर्थात् हकार से परवर्ती यकार उससे पूर्व आ जाता है—

सय्ह—सह्य ।

गुय्ह—गुह्य ।

पद के आदि में स्थित य अपने पूर्ववर्ती दंत्य अक्षर को भी यकार में परिणत कर देता है—

उद् + युञ्जति = उय्युञ्जति ।

उद् + याति = उय्याति ।

उद् + यान = उय्यान ।

र

पद के अंत में स्थित र प्रायः अपने परवर्ती अक्षर में परिवर्तित हो जाता है—

कर् + तब्ब = कत्तब्ब ।

कर् + ता = कत्ता ।

कर् + य = कय्य ।

धर् + म = धम्म ।

अधिकतर रेफ का लोप भी देखा जाता है—

मर् + त = मत ।

कर् + त = कत ।

कभी-कभी रेफ के लोप होने पर उसका पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो जाता है। यथा—

कर् + तब्ब = कातब्ब ।

कर् + तुं = कातुं ।

नोट—संस्कृत में रेफ का रेफ के परे लोप होता है और तब पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है। यथा—पुनर् + रमते = पुना रमते ।

रेफ् के बाद नकार आने से नकार को णत्व हो जाता है और फिर रेफ् भी णत्व में परिणत हो जाता है।

चर् + न = चिण्ण । अकार के स्थान में इकार संस्कृत में भी होता है और चीर्ण रूप बनता है।

रेफ और लकार के संयोग होने से रेफ लकार में परिणत हो जाता है—

दुर् + लभो = दुल्लभो ।

स

प्स के स्थान में च्छ होता है—

जिगुप् + सा = जिगुच्छा ।

त्स के स्थान में भी च्छ होता है—

तिकित् + सा = तिकिच्छा ।

कभी-कभी स के बाद त आने से त के स्थान में र होता है और स भी ट में परिणत हो जाता है—

कस् + त = कट्ठ ।

किलिस् + त = किलिट्ठ ।

डस् + त = डट्ठ ।

नोट—यहाँ प्रत्यक्ष ही संस्कृत का पूरा प्रभाव पड़ा है । संस्कृत में कष्ट, क्लिष्ट, दष्ट आदि मूर्धन्य के कारण होते हैं । पाली में मूर्धन्य ष के स्थान में दंत्य स हो गया है, तो भी वह अपना असर नहीं छोड़ बैठा है और फलतः अपने परवर्ती दंत्य अक्षर पर वह प्रभाव डाल ही देता है ।

पद के आदि में स्थित सकार कभी-कभी अपने पूर्ववर्ती दंत्य अक्षर को भी सकार में बदल देता है—

उद् + साह = उस्साह ।

उत् + सुक = उस्सुक ।

अधिकतर स और त मिलकर त्त होता है—

ऋस् + त = ऋत्त ।

कभी-कभी स और त मिलकर त्थ होता है—

वस् + त = वुत्थ ।

ह

पद से पर पदादि हकार के स्थान में पूर्ववर्ती वर्ण का द्वितीय अथवा चतुर्थ अक्षर होता है । वर्ग के प्रथम अक्षर के बाद हकार आने से उसके स्थान में द्वितीय और तृतीय के बाद आने से चतुर्थ अक्षर होता है । उदाहरण—

उद् + हरति = उद्धरति ।

उद् + हरण = उद्धरण ।

उद् + हत = उद्धत ।

नोट—संस्कृत में भी यही रूप होते हैं और उसमें इतनी अड़चन नहीं पड़ती ; वहाँ तो साधारण संधि के नियम से ही काम चल जाता है । यहाँ भी संधि का ही यथार्थ में यह विषय है ।

अनुनासिक (मकार, नकार आदि) तथा यकार और वकार के साथ हकार का संयोग होने से प्रायः स्थान परिवर्तन हो जाता है। यथा—

गह् + ण = गण्ह ।

मह् + यं = मय्हं ।

जिह् + वा = जिव्हा ।

कभी-कभी ह और य के संयोग होने पर ह के स्थान में य हो जाता है ।

लेह् + य = लेय्य ।

कभी-कभी—विशेष करके हन् धातु में—हकार के स्थान में घ हो जाता है । यथा—

हनति—अथवा घनेति ।

घञ्ज—(हन्+य) ।

घम्मति—हम्मति ।

नोट—संस्कृत में भी हन् धातु के ह के स्थान में विशेष अवसर पर घ होता है—यथा घातयति, घात आदि ।

पदांत ह और त के स्थान में कभी-कभी द्ध और कभी-कभी ढ देखा जाता है यथा—

दुह् + त = दुद्ध (संस्कृत में दुग्ध होता है) ।

लिह् + तुं = लेढुं ।

कभी-कभी इस ढ के स्थान में ल भी होता है ।

लेलुं; मुह् + त = मूढ = मूल ।

रूह् + त = रूढ = रूल ।

इकार और यकार के स्थानपरिवर्तन के संबंध में उल्लेख हो चुका है; उसके अतिरिक्त भी अनेक स्थलों में, पाली में, इस प्रकार के उदाहरण मिलते हैं, जहाँ संस्कृत के शब्दों में अक्षरों का परस्पर स्थान-विनिमय देखा जाता है। कुछ उदाहरण ये हैं—

पर्युदाहासि के स्थान में पयिरुदाहासि।

आरिय के स्थान में आयिर।

करिय—कयिर।

मसक—मकस।

रस्मि—रंसि।

कभी-कभी उच्चारण सौकर्य के लिये अथवा वृत्त के अनुरोध से पदखंड का ही लोप होता देखा जाता है। यथा—

छडंगुल—छंगुल। हिंदी में छंगा शब्द आता है।

दससहस्सी—दसहस्सी।

जम्बुदीपं अवेक्खन्तो अद्दस = जम्बुदीपं अवेक्खन्तो अद्द।

अभिञ्जाय सच्छिकत्वा—अभिञ्जा सच्छिकत्वा।

सुबंत प्रक्रिया

जैसा कि प्रथम पृष्ठ में लिखा गया है, पाली में संस्कृत की अपेक्षा वर्ण कम हैं। वचन और विभक्ति के विषय में पाली में ह्रास ही दृष्टि-गोचर होता है। आधुनिक भाषाओं के समान पाली में भी द्विवचन नहीं होता और उसका काम बहुवचन से लिया जाता है। यथार्थ में इसके दोनों वचनों की संज्ञा एकवचन और अनेकवचन ही अधिक उपयुक्त होगी। एक की विवक्षा में एकवचन और एक से अधिक की विवक्षा में अनेकवचन का प्रयोग होता है। विभक्ति भी कम हैं। चतुर्थी और षष्ठी के रूपों में कोई भेद है ही नहीं। अन्यान्य विभक्तियों में भी प्रायः समान रूप मिलते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में नपुंसक-लिंग में प्रथमा और द्वितीया के रूप समान होते हैं, उसी प्रकार

इसमें भी अनेक शब्दों में प्रथमा और द्वितीया के अनेकवचन के रूप समान होते हैं। तृतीया और पंचमी के अनेकवचन के रूप प्रायः समान-समान मिलते हैं।

साधारणतया विभक्तियों के प्रत्यय ये हैं—

	एकवचन	अनेकवचन
प्रथमा	सि	यो
द्वितीया	अं	यो
तृतीया	ना	हि
चतुर्थी	स	नं
पंचमी	स्मा	हि
षष्ठी	स	नं
सप्तमी	स्मिं	सु

किंतु विशेष-विशेष शब्दों में विशेष रूप देखे जाते हैं। तृतीया और पंचमी के अनेकवचन के "हि" के स्थान में विकल्प से "भि" पाया जाता है तथा पंचमी एकवचन के "स्मा" के स्थान में "म्हा" और सप्तमी एकवचन "स्मिं" के स्थान में "म्हि" भी मिलता है। यह पहले ही लिखा जा चुका है कि पाली में व्यंजनांत पदों का प्रायः प्रयोग नहीं होता, इसलिये अजंत और हलंत भेद की इसमें योग्यता नहीं है; तथापि संस्कृत में जो पद स्वरांत हैं, उनके पाली रूपों में तथा संस्कृत के व्यंजनांत पद जो पाली में स्वरांत हो जाते हैं, उनके रूपों में बहुत अंतर पाया जाता है, इसलिये संस्कृत के आधार पर स्वरांत और व्यंजनांत भेद देने से यहाँ भी सुविधा होगी।

स्वरांत

अकारांत पुल्लिंग बुद्ध शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	बुद्धो	बुद्धा

द्वि०	बुद्धं	बुद्धे
तृ०	बुद्धेन	बुद्धेहि, बुद्धेभि
च०	बुद्धाय, बुद्धस्स,	बुद्धानं
पं०	बुद्धा, बुद्धस्मा, बुद्धम्हा	बुद्धेहि, बुद्धेभि
ष०	बुद्धस्स	बुद्धानं
स०	बुद्धे, बुद्धस्मि, बुद्धम्हि,	बुद्धेसु

ऊपर लिखे रूपों के देखने से ज्ञात होगा कि अकारांत शब्दों के प्रत्यय इस प्रकार हैं—

	ए०	अने०		ए०	अने०
प्र०	ओ	आ	च०	स्स, आय	आनं
द्वि०	ं	ए	पं०	आ, स्मा, म्हा	एहि, एभि
तृ०	इन	एहि, एभि	ष०	स्स	आनं
			स०	इ, स्मि, म्हि	सु

प्रथमा के बहुवचन में कभी-कभी आसे प्रत्यय भी देखा जाता है और यह वैदिक रूप देवासः की छाया पर ज्ञात होता है। इसी तरह पंचमी और सप्तमी के एकवचनों के "स्मा" और "स्मि" सर्वनामों के अनुकरण में प्रयोग किए गए हैं, ऐसा प्रतीत होता है। अन्यान्य अकारांत पुल्लिंग शब्द भी बुद्ध शब्द के समान होंगे। अकारांत नपुंसकलिंग शब्दों के रूप कुछ भिन्न होते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में प्रथमा और द्वितीया दोनों में समान रूप होते हैं, उसी प्रकार पाली में भी प्रायः साम्य है और संस्कृत के एकवचन और बहुवचन के 'अनुस्वार' और 'आनि' पाली में भी पहुँच गए हैं।

यथा—प्र०	एक०	रूपम्	अने०	रूपानि
द्वि०	,,	रूपम्	,,	रूपानि

प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनों में क्रमशः 'आ' और 'ए' वैकल्पिक प्रत्यय भी होते हैं। और-और विभक्तियों में भी कुछ-कुछ

अंतर दृष्टिगोचर होता है, अतः अकारांत नपुंसकलिंग के रूप नीचे दिए जाते हैं—

अकारांत नपुंसकलिंग रूप शब्द

	एकवचन	अनेकवचन	
प्र०	रूपं	रूपानि,	रूपा
द्वि०	रूपं	रूपानि,	रूपे
तृ०	रूपेन	रूपेहि,	रूपेभि
च०	रूपस्स, रूपाय	रूपानं	
पं०	रूपा, रूपस्मा, रूपम्हा, रूपतो	रूपेहि,	रूपेभि
ष०	रूपस्स	रूपानं	
स०	रूपे, रूपस्मि, रूपम्हि	रूपेसु	

इकारांत पुल्लिंग अग्गि शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अग्गि	अग्गी
द्वि०	अग्गिं	अग्गी, अग्गयो
तृ०	अग्गिना	अग्गीहि, अग्गीभि
च०	अग्गिनो, अग्गिस्स	अग्गीनं
पं०	अग्गिना, अग्गिस्मा, अग्गिम्हा	अग्गीहि, अग्गीभि
ष०	अग्गिनो, अग्गिस्स	अग्गीनं
स०	अग्गिनि, अग्गिस्मिं, अग्गिम्हि	अग्गिसु, अग्गीसु
संबो	अग्गि	अग्गी, अग्गयो, (अग्गियो)

इसी प्रकार अन्य इकारांत पुल्लिंग शब्दों के रूप होंगे।

किसी-किसी इकरांत शब्द के प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनों में 'यो' के स्थान में 'नो' होता है। यथा—सारमतिनो, सम्मादिट्ठिनो।

संस्कृत के समान इकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के रूप में पाली में भी विशेषता है—यह उदाहरण द्वारा स्पष्ट होगी।

इकारांत स्त्रीलिंग रत्ति (रात्रि) शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	रत्ति	रत्ती, रत्तियो, रत्यो
द्वि०	रत्ति	रत्ती, रत्तियो, रत्यो
तृ०	रत्तिया, रत्या	रत्तीहि, रत्तीभि
च०	रत्तिया रत्या	रत्तीनं
पं०	रत्तिया, रत्या	रत्तीहि, रत्तीभि
ष०	रत्तिया, रत्या	रत्तीनं
स०	रत्तिया, रत्या, रत्तियं, रत्यं	रत्तीसु
सं०	रत्ति	रत्ती, रत्तियो, रत्यो

कहीं-कहीं पंचमी के एकवचन में तसिल् प्रत्ययवाला रत्तितो रूप भी पाया जाता है।

सप्तमी के एकवचन में रत्तो रूप भी देखा जाता है।

इकारांत स्त्रीलिंग 'जाति' शब्द में कुछ विशेषता है। अतः उसके रूप ध्यान देने योग्य हैं—

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	जाति	जाती, जातियो, जत्यो, जच्चो
द्वि०	जाति	जाती, जातियो, जत्यो, जच्चो
तृ०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीहि, जातीभि
च०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीनं
पं०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीहि, जातीभि
ष०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीनं
स०	जातिया, जत्या, जच्चा, जातियं, जत्यं, जच्चं	जातीसु
सं०	जाति	जाती, जातियो, जत्यो, जच्चो

तृतीया से सप्तमी तक के एकवचन के रूप समान ही हैं

प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन समान हैं तथा पंचमी और तृतीया के बहुवचन के रूप भी एक-से हैं। चतुर्थी और षष्ठी के रूप तो सर्वत्र प्रायः समान रहते ही हैं।

संस्कृत के क्तिन् प्रत्ययांत शब्द तथा रस्मि (रश्मि), भूमि, पालि, युवति, धूलि आदि शब्द रति शब्द के समान हैं। भूमि शब्द के सप्तमी के एकवचन में भूम्या रूप भी पाया जाता है।

इकारांत नपुंसक लिंग—वारि शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	वारि	वारीनि, वारी
द्वि०	वारिं	वारीनि, वारी
तृ०	वारिना	वारीहि, वारीभि
च०	वारिस्स, वारिनो	वारीनं
पं०	वारिना, वारिस्मा, वारिम्हा	वारीहि, वारीभि
ष०	वारिस्स, वारिनो	वारीनं
स०	वारिस्मिं, वारिम्हि	वारीसु
सं०	वारि	वारीनि, वारी

अट्ठि, अक्खि, सप्पि, छदि, सत्थि, दधि, अच्छि आदि शब्दों के रूप भी वारि शब्द के समान होंगे।

उकारांत पुल्लिंग भिक्खु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	भिक्खु	भिक्खू, भिक्खवो
द्वि०	भिक्खुं	भिक्खू, भिक्खवो
तृ०	भिक्खुना	भिक्खूहि, भिक्खूभि
च०	भिक्खुस्स, भिक्खुनो	भिक्खूनं
पं०	भिक्खुना, भिक्खुस्स, भिक्खुम्हा	भिक्खूहि, भिक्खूभि

	एकवचन	अनेकवचन
ष०	भिक्खुस्स, भिक्खुनो	भिक्खूनं
स०	भिक्खुस्मिं, भिक्खुम्हि	भिक्खूसु
सं०	भिक्खु	भिक्खू, भिक्खवो, भिक्खवे

कहीं-कहीं प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनों में वो के स्थान में यो का प्रयोग भी पाया जाता है। यथा—जंतुयो, हेतुयो।

पसु, बन्धु, मच्चु (मृत्यु), बाहु, केतु, फरसु (परशु), वेलु (वेणु), उच्छु (इक्षु) आदि शब्दों के रूप भी भिक्षु शब्द के समान होंगे।

उकारांत नपुंसकलिंग चक्खु (चक्षुः)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	चक्खु	चक्खूनि, चक्खू
द्वि०	चक्खुं	चक्खूनि, चक्खू
तृ०	चक्खुना	चक्खूहि, चक्खूभि
च०	चक्खुस्स, चक्खुनो	चक्खूनं
पं०	चक्खुना, चक्खुस्मा—म्हा	चक्खूहि, चक्खूभि
ष०	चक्खुस्स, चक्खुनो	चक्खूनं
स०	चक्खुस्मिं—म्हि	चक्खूसु
सं०	चक्खु	चक्खूनि, चक्खू

प्रथमा के एकवचन में चक्खुं रूप भी मिलता है।

धनु (धनुः), दारु, मधु, मस्सु (श्मश्रु), अस्सु (अश्रु), वत्थु (वस्तु) आदि उकारांत नपुंसकलिंग शब्दों के रूप भी इसी प्रकार समझने चाहिए।

पाली में एकारांत अथवा ओकारांत शब्दों का प्रायः अभाव है। केवल गो शब्द पाया जाता है। उसका भी प्रथमा छोड़कर अन्य विभक्तियों के एकवचनों में गव और गाव हो जाता है।

गो शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गो	गवो, गावो
द्वि०	गवं, गावं, गवुं, गावुं	गवो, गावो
तृ०	गवेन, गावेन	गोहि, गोभि, गवेहि
च०	गवस्स, गावस्स	गवं, गोनं, गुन्नं
पं०	गवा, गावा, गवस्मा—म्हा	गोहि, गोभि, गवेहि
ष०	गवस्स, गावस्स	गवं, गोनं, गुन्नं
स०	गवे, गावे, गवस्मिं, गावस्मिं गवम्हि गावम्हि	गोसु, गवेसु, गावेसु
सं०	गो	गवो, गावो

पाली में विशुद्ध आकारांत शब्दों का प्रायः अभाव है। संस्कृत सखि शब्द का सखा रूप होता है, परंतु इस शब्द के रूप बहुसंख्यक हैं और नियमबद्ध नहीं हैं। किसी-किसी विभक्ति में इकारांत से विभक्ति आती है, कहीं-कहीं आकारांत से। कहीं-कहीं रेफ का भी इसे आगम होता है। उदाहरण से यह स्पष्ट होगा।

सखा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सखा	सखायो, सखानो, सखिनो, सखा
द्वि०	सखानं, सखारं, सखं	सखी, सखायो, सखानो, सखिनो
तृ०	सखिना	सखारेहि—रेभि, सखेहि—भि
च०	सखिस्स, सखिनो	सखीनं, सखानं, सखारानं
पं०	सखिना, सखारा, सखारस्मा	सखेहि, सखेभि, सखारेहि, सखारेभि
ष०	सखिनो, सखिस्स	सखीनं, सखानं, सखारानं
स०	सखे	सखेसु

	एकवचन	अनेकवचन
सं०	सख, सखा, सखि, सखी, सखे,	सखायो, सखानो, सखिनो, सखा

आकारांत स्त्रीलिंग कन्या शब्द—'कञ्ञा'

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	कञ्ञा	कञ्ञा, कञ्ञायो
द्वि०	कञ्ञं	कञ्ञा, कञ्ञायो
तृ०	कञ्ञाय	कञ्ञाहि, कञ्ञाभि
च०	कञ्ञाय	कञ्ञानं
पं०	कञ्ञाय	कञ्ञाहि, कञ्ञाभि
ष०	कञ्ञाय	कञ्ञानं
स०	कञ्ञाय, कञ्ञायं	कञ्ञासु
सं०	कञ्ञे	कञ्ञा, कञ्ञायो

इसी प्रकार पञ्ञा, सद्धा, विज्जा, तण्हा, इच्छा, गाथा, सेना, जावा, गीवा, भिक्खा आदि शब्दों के रूप होंगे ।

संस्कृत में अंबावाचक शब्दों के संबोधन एकवचन में ह्रस्व हो जाता है, एकार नहीं होता । पाली में भी एकार नहीं होता । या तो प्रथमा के एकवचन के समान दीर्घांत रूप होता है अथवा संस्कृत के अनुसार ह्रस्वांत । पाली में अम्बा, अम्मा, अन्ना और ताता ये चार शब्द मातृवाचक हैं । इनके संबोधन एकवचन में अम्बा, अम्ब; अम्मा, अम्म; अन्ना, अन्न और ताता, तात—ये रूप होते हैं ।

ईकारांत स्त्रीलिंग नदी शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	नदी	नदी, नदियो, नज्जो
द्वि०	नदिं, नदियं	नदी, नदियो, नज्जो

	एकवचन	अनेकवचन
तृ०	नदिया, नज्जा	नदीहि, नदीभि
च०	नदिया, नज्जा	नदीनं
पं०	नदिया, नज्जा	नदीहि, नदीभि
ष०	नदिया, नज्जा	नदीनं
स०	नदिया, नज्जा, नज्जं	नदीसु
सं०	नदि	नदी, नदियो, नज्जो

मही, वेतरणी, वापी, कदली, घटी आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार के होंगे। ब्राह्मणी इत्यादि कुछ शब्दों के, संस्कृत के अनुसार, कुछ विशेष रूप भी देखे जाते हैं। यथा प्र० द्वि० तथा संबोधन के बहुवचनों में उसका ब्राह्मण्यो रूप भी होता है। इसी प्रकार तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी और सप्तमी के एकवचनों में ब्राह्मण्या तथा स० एक० में ब्राह्मण्यं होता है। इसी तरह दासी शब्द का प्र० द्वि० तथा संबोधन के बहुवचनों में दास्यो तथा तृ० च० पं० ष० स० के एकवचनों में दास्या एवं स० एक० में दास्यं रूप होते हैं।

उकारांत स्त्रीलिंग धेनु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	धेनु	धेनू, धेनुयो
द्वि०	धेनुं	धेनू, धेनुयो
तृ०	धेनुया	धेनूहि, धेनूभि
च०	धेनुया	धेनूनं
पं०	धेनुया	धेनूहि, धेनूभि
ष०	धेनुया	धेनूनं
स०	धेनुयं, धेनुया	धेनूसु
सं०	धेनु	धेनू, धेनुयो

पंचमी के एकवचन में धेनुतो रूप भी प्रायः पाया जाता है ।

धातु, रज्जु, दद्दु, नत्थु, कच्छु, विज्जु, यागु, आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार होंगे ।

ऊकारांत पुलिंग सयंभू शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सयंभू	सयंभू, सयंभुवो
द्वि०	सयंभुं	सयंभू, सयंभुवो
तृ०	सयंभुना	सयंभूहि—भि
च०	सयंभुस्स, सयंभुनो	सयंभूनं
पं०	सयंभुना, सयंभुस्मा—म्हा	सयंभूहि—भि
ष०	सयंभुस्स, सयंभुनो	सयंभूनं
स०	सयंभुस्मिं—म्हि	सयंभूसु
सं०	सयंभू	सयंभू, सयंभुवो

ऊकारांत स्त्रीलिंग वधू शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	वधू	वधू, वधुयो
द्वि०	वधुं	वधू, वधुयो
तृ०	वधुया	वधूहि—भि
च०	वधुया	वधूनं
पं०	वधुया	वधूहि—भि
ष०	वधुया	वधूनं
स०	वधुया, वधुयं	वधूसु
सं०	वधु	वधू, वधुयो

जंबू, सरभू, सरबु, सुतनू, चमू, वामोरू प्रभृति शब्दों के रूप वधू शब्द के समान होंगे ।

उकारांत पुल्लिंग पितु शब्द (पितृ)

	एकवचन	अनेवचन
प्र०	पिता	पितरो (पिता)
द्वि०	पितरं	पितरो, पितरे
तृ०	पितरा, पितुना	पितरेहि, पितरेभि, पितूहि, पितुभि
च०	पितु, पितुनो, पितुस्स	पितरानं, पितानं, पितुनं, पितुन्नं
पं०	पितरा, पितुना	पितूनं, पितुनं, पितरेहि, पितरेभि, पितूहि, पितुभि
ष०	पितु, पितुनो, पितुस्स,	पितरानं, पितानं, पितूनं, पितुन्नं
स०	पितरि	पितरेसु, पितुसु, पितूसु
सं०	पित, पिता	पितरो

मातु, जामातु आदि शब्दों के ऐसे ही रूप होंगे।

उकारांत कत्तु शब्द—(कर्तृ)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	कत्ता	कत्तारो
द्वि०	कत्तारं	कत्तारो, कत्तारे
तृ०	कत्तारा, कत्तुना	कत्तरेहि, कत्तारेभि
च०	कत्तु, कत्तुनो कत्तुस्स	कत्तारानं, कत्तानं, कत्तूनं
पं०	कत्तारा	कत्तारेहि, कत्तारेभि
ष०	कत्तु, कत्तुनो, कत्तुस्स	कत्तारानं, कत्तानं, कत्तून
स०	कत्तरि	कत्तारेसु, कत्तूसु
सं०	कत्त, कत्ता, कत्ते	कत्तारो

सत्थु (शास्तृ), भत्तु (भर्तृ), नेतु, झातु (ध्यातृ), छेत्तु, दातु प्रभृति शब्दों के रूप ऐसे ही होंगे।

उकारांत स्त्रीलिंग मातु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	माता	माता, मातरो
द्वि०	मातरं	माता, मातरे
तृ०	मातरा, मातुया (क्वचित्) मत्या, मात्या,	मातरेहि, मातरेभि, मातूहि, मातूभि
च०	मातु, मातुया, मत्या, मातुस्स	मातानं, मातूनं (मातुन्नं) मातरानं
पं०	मातरा, मातुया, मत्या	मातरेहि, मातरेभि मातूहि, मातूभि
ष०	मातु, मातुया मत्या, मातुस्स	मातानं, मातूनं (मातुन्नं), मातरानं
स०	मातरि, मातुया, मत्या, मातुयं, मत्यं	मातूसु, मातरेसु
सं०	मात, माता	माता, मातरो

धीतु (दुहितृ) शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	धीता	धीता, धीतरो
द्वि०	धीतरं, धीतं	धीतरो, धीतरे
तृ०	धीतरा, धितुया	धीतरेह, धीतरेभि, धीतूहि, धीतुभि
च०	धीतु, धीतुया	धीतानं, धीतूनं, धीतरानं
पं०	धीतरा, धीतुया	धीतरेहि, धीतरेभि, धीतूहि, धीतुभि
ष०	धीतु, धीतुया	धीतानं, धीतूनं, धीतरानं

	एकवचन	अनेकवचन
स०	धीतरि, धीतुया, धीतुयं	धीतूसु, धीतरेसु
सं०	धीत, धीता	धीता, धीतरो

व्यंजनांत

पाली में व्यंजनांत पदों का प्रयोग प्रायः नहीं होता, यह पूर्व ही लिखा जा चुका है, परंतु संस्कृत में जो शब्द व्यंजनांत हैं, और पाली व्याकरण के अनुसार जब स्वरांत हो जाते हैं तब भी उनके रूप में साधारण स्वरांत पदों की अपेक्षा भेद रहता है, और प्रायः संस्कृत के व्यंजन नकार तकार आदि स्वरांत पदों पर भी अपना प्रभाव प्रकट कर देते हैं। इसलिये सौकर्यार्थ उन्हें (व्यंजनांत जो पाली में स्वरांत हो गए हैं) पृथक् रखना ही उचित होगा।

अत्ता शब्द (आत्मन्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अत्ता	अत्ता, अत्तानो
द्वि०	अत्तानं, अत्तं	अत्तानो, अत्ते
तृ०	अत्तना, अत्तेन	अत्तनेहि, अत्तनेभि, अत्तेहि, अत्तेभि
च०	अत्तनो, अत्तस्स	अत्तानं अत्तनेहि, अत्तनेभि
पं०	अत्तना, अत्तस्मा, अत्तह्मा	अत्तेहि, अत्तेभि
ष०	अत्तनो, अत्तस्स	अत्तानं
स०	अत्तनि, अत्ते, अत्तस्मि अत्तस्मिं, अत्तह्मि	अत्तनेसु
सं०	अत्त, अत्ता	अत्तानो, अत्ता

ब्रह्मा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	ब्रह्मा	ब्रह्मानो

	एकवचन	अनेकवचन
द्वि०	ब्रह्मानं, ब्रह्मं	ब्रह्मानो
तृ०	ब्रह्मना (ब्रह्मुना),	ब्रह्मेहि, ब्रह्मेभि, ब्रह्मूहि, ब्रह्मूभि
च०	ब्रह्मस्स, ब्रह्मुनो	ब्रह्मानं, ब्रह्मूनं
पं०	ब्रह्मना (ब्रह्मुना),	ब्रह्मेहि, ब्रह्मेभि, ब्रह्मूहि, ब्रह्मूभि,
ष०	ब्रह्मस्स, ब्रह्मनो	ब्रह्मानं, ब्रह्मूनं
स०	ब्रह्मनि, ब्रह्मे, ब्रह्मस्मिं, ब्रह्मम्हि,	ब्रह्मेसु
सं०	ब्रह्मे	ब्रह्मानो, ब्रह्मा

राजा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	राजा	राजानो राजा
द्वि०	राजानं, राजं	राजानो
तृ०	रञ्ञा, राजेन, राजिना	राजूहि, राजूभि, राजेहि, राजेभि
च०	रञ्ञो, राजिनो, राजस्स	रञ्ञं, राजूनं, राजानं
पं०	रञ्ञा, राजस्मा, राजम्हा	राजूहि, राजूभि, राजेहि, राजेभि
ष०	रञ्ञे, राजिनो, राजस्स	रञ्ञं, राजूनं, राजानं
स०	रञ्ञे, राजिनि, राजस्मिं, राजम्हि	राजुसु, राजेसु
सं०	राज, राजा	राजानो, राजा

पुमा (पुमान्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	पुमा, पुमो	पुमा, पुमानो,
द्वि०	पुमानं, पुमं	पुमानो, पुमाने, पुमे
तृ०	पुमानां, पुमुना, पुमेन	पुमानेहि, पुमानेभि, पुमेहि, पुमेभि

	एकवचन	अनेकवचन
च०	पुमुनो, पुमस्स	पुमानं
पं०	पुमाना, पुमुना, पुमा, पुमस्मा, पुमम्हा	पुमानेहि, पुमानेभि, पुमेहि, पुमेभि
ष०	पुमुनो, पुमस्स	पुमानं
स०	पुमाने, पुमे, पुमस्मिं, पुमम्हि	पुमानेसु, पुमांसु, पुमेसु
सं०	पुमं, पुम	पुमानो, पुमा

सा (श्वा)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सा	सा, सानो
द्वि०	सं, सानं	से, साने
तृ०	सेन, साना	साने, सेहि, सेभि, साहि, साभि
च०	सस्स, साय	सानं
पं०	सा, सस्मा, सम्हा, साना	सेहि, सेभि, सानेहि, सानेभि
ष०	सस्स	सानं
स०	से, सस्मिं, सम्हि, साने	सासु
सं०	स	सा, सानो

गुणवन्तु शब्द—पुलिंग (गुणवत्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गुणवा	गुणवन्तो, गुणवन्ता
द्वि०	गुणवन्तं	गुणवन्ते
तृ०	गुणवता, गुणवन्तेन	गुणवन्तेहि, गुणवन्तेभि
च०	गुणवतो, गुणवन्तस्स	गुणवतं, गुणवन्तानं
पं०	गुणवता, गुणवन्ता, गुणवन्तस्मा, गुणवन्तम्हा	गुणवन्तेहि, गुणवन्तेभि

	एकवचन	अनेकवचन
ष०	गुणवतो, गुणवन्तस्स	गुणवतं गुणवन्तानं
स०	गुणवत्ति, गुणवन्ते, गुणवन्तस्मिं, गुणवन्तम्हि	गुणवन्तेसु
सं०	गुणवं, गुणव, गुणवा	गुणवन्तो, गुणवन्ता

कुलवन्तु, यसवन्तु, भगवन्तु, चक्खुमन्तु आदि शब्दों के रूप इसी प्रकार के होंगे।

गच्छन्त शब्द (गच्छत्) पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गच्छं, गच्छन्तो	गच्छं, गच्छन्तो, गच्छन्ता
द्वि०	गच्छन्तं	गच्छन्ते
तृ०	गच्छता, गच्छन्तेन	गच्छन्तेहि, गच्छन्तेभि
च०	गच्छतो, गच्छन्तस्स	गच्छतं, गच्छन्तानं
पं०	गच्छता, गच्छन्ता, गच्छन्तस्मा, गच्छन्तम्हा	गच्छन्तेहि, गच्छन्तेभि
ष०	गच्छतो, गच्छन्तस्स	गच्छन्तं, गच्छन्तानं
स०	गच्छति, गच्छन्ते, गच्छन्तस्मिं, गच्छन्तम्हि	गच्छन्तेसु
सं०	गच्छतं	गच्छन्ता

चरन्त, तिट्ठन्त, रुदन्त, सुणन्त (श्रृण्वन्त्), पचन्त (पचत्) प्रभृति शब्दों के ऐसे ही रूप होंगे।

महन्त और अरहन्त शब्दों के प्रथमा एकवचन में महा और अरहा रूप भी होते हैं।

भवन्त शब्द के रूप भी गच्छन्त के समान होंगे। विशेषता यह है—प्र० ब० भवन्तो, भोन्तो, भवन्ता; तृ० ए० भवता, भोता, भवन्तेन, च० ष० एक० भवतो, भोतो, भवन्तस्स; संबो० एक० भो,

भन्ते, भोन्त; बहु० भवन्तो, भोन्वतो, भवन्ता, भोन्ता। सन्त शब्द के तृ० ब० में सब्भि रूप विकल्प से होता है।

अद्ध शब्द (अध्वन्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अद्धा	अद्धा, अद्धानो
द्वि०	अद्धानं	अद्धाने
तृ०	अद्धुना	अद्धानेहि, अद्धानेभि
च०	अद्धुनो	अद्धानं
पं०	अद्धुना	अद्धानेहि, अद्धानेभि
ष०	अद्धुनो	अद्धानं
स०	अद्धनि, अद्धाने	अद्धानेसु
सं०	अद्ध	अद्धा, अद्धानो

यहाँ यह नोट करने योग्य है कि तृतीया, चतुर्थी, पंचमी और षष्ठी में संस्कृत के अध्वन् शब्द के वकार के प्रभाव के कारण संप्रसारण उकार हुआ है।

युव शब्द (युवन्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	युवा (यूनो)	युवा, युवानो, युवाना
द्वि०	युवानं, युवं	युवाने, युवे
तृ०	युवाना, युवनेन, युवेन	युवानेहि, युवानेभि, युवेहि, युवे
च०	युवानस्स, युवस्स	युवानानं, युवानं
पं०	युवना, युवानस्मा, युवानम्हा	युवनेहि, युवानेभि युवेहि, युवेभि
ष०	युवानस्स, युवस्स	युवानानं, युवानं
स०	युवाने, युवे, युवानस्मिं,	युवानेसु, युवासु, युवेसु

	एकवचन	अनेकवचन
	युवानम्हि, युवस्मिं, युवम्हि	
सं०	युव, युवा, युवान, युवाना	युवानो, युवाना

मघव शब्द के रूप भी ऐसे ही होंगे। किंतु वैकल्पिक मघवन्तु शब्द के रूप गुणवन्तु के समान होंगे।

मुद्ध शब्द (मूर्धन्) के रूप में विशेषता है—

प्र० ए० मुद्धा—ब० मुद्धा, मुद्धानो; द्वि० ए० मुद्धं—बहु० मुद्धाने; तृ० ए० एक० मुद्धना—स० एक० मुद्धनि—बहु० मुद्धानेसु

मनो (मनस)

	एकवचन
प्र०	मनो, मनं
द्वि०	मनो, मनं
तृ०	मनसा, मनेन
च०	मनसो, मनस्स
पं०	मनसा, मनस्मा, मनम्हा
ष०	मनसो, मनस्स
स०	मनसि, मने, मनस्मिं, मनम्हि
सं०	मनो, मनं

मनो शब्द के रूप बहुवचन में नहीं पाए जाते; यद्यपि पाली व्याकरणकारों ने उसे स्थान दिया है। विधुशेखर भट्टाचार्य ने इस संबंध में कुछ नहीं लिखा है, किंतु दुरोसील तथा म्युलर प्रभृति ने इस विषय का उल्लेख किया है।

सिर, उर, तेज, पय, यस, चेत आदि शब्द मनोगण के अंतर्गत हैं और इनके रूप भी मनो शब्द के समान होते हैं। संस्कृत में यद्यपि ये सब शब्द केवल नपुंसक लिंग हैं, किंतु पाली व्याकरणकारों ने मनोगण को पुल्लिंग और नपुंसक लिंग माना है।

आयु शब्द (आयुस्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि
द्वि०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि
तृ०	आयुना, आयुसा	आयूहि, आयूभि
च०	आयुस्स, आयुनो	आयूनं, आयुसं
पं०	आयुना, आयुसा	आयूहि, आयूभि
ष०	आयुस्स, आयुनो	आयूनं, आयुसं
स०	आयुनि, आयुसि	आयूसु
सं०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि,

दण्डी शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	दण्डी	दण्डी, दण्डिनो (दण्डियो)
द्वि०	दण्डिनं, दण्डिं (दण्डियं)	दण्डी, दण्डिनो (दण्डिने, दण्डिये)
तृ०	दण्डिना	दण्डीहि, दण्डीभि
च०	दण्डिनो, दण्डिस्स	दण्डीनं
पं०	दण्डिना, दण्डिस्मा, दण्डिम्हा	दण्डीहि, दण्डीभि
ष०	दण्डिनो, दण्डिस्स	दण्डीनं
स०	दण्डिनि, दण्डिने दण्डिस्मिं, दण्डिम्हि	दण्डीसु, दण्डिनेसु
सं०	दण्डि	दण्डी, दण्डिनो

गुणवन्तु शब्द नपुंसकलिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गुणवं, गुणवन्तं	गुणवन्ता, गुणवन्तानि गुणवन्ति,
द्वि०	गुणवन्तं	गुणवन्ते, गुणवन्तानि, गुणवन्ति

तृतीया प्रभृति में पुल्लिंग शब्द के समान रूप होंगे। वन्तु, मन्तु प्रत्यायान्त नपुंसकलिंग शब्दों के रूप ऐसे ही होंगे।

अकारांत गच्छन्त शब्द नपुंसकलिंग (गच्छत्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गच्छं, गच्छन्तं	गच्छन्ता, गच्छन्तानि
द्वि०	गच्छन्तं	गच्छन्ते, गच्छन्तानि

शतृ प्रत्ययांत सब शब्दों के रूप नपुंसकलिंग में ऐसे ही होंगे। मह (महत्) शब्द के रूप में विशेषता है—प्र० ए० महं, महन्तं, महा; बहु०—महन्ता, महन्तानि; द्वि०—एक० महन्तं; बहु०—महन्ते, महन्तानि; तृतीया प्रभृति के रूप पुल्लिंग के समान होंगे।

सर्वनाम

जिस प्रकार संस्कृत में सर्वनाम के रूपों में कुछ-कुछ अंतर रहता है, उसी प्रकार पाली में भी विशेषताएँ हैं। इस संबंध में भी पाली संस्कृत का बहुत अधिक अनुकरण करती है। यह उदाहरण से स्पष्ट होगा।

पुल्लिंग सर्व शब्द (सब्ब)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सब्बो	सब्बे
द्वि०	सब्बं	सब्बे
तृ०	सब्बेन	सब्बेहि, सब्बेभि
च०	सब्बस्स	सब्बेसं, सब्बेसानं
पं०	सब्बस्मा, सब्बम्हा	सब्बेहि, सब्बेभि
ष०	सब्बस्स,	सब्बेसं, सब्बेसानं
स०	सब्बस्मिं, सब्बम्हि	सब्बेसु
सं०	सब्ब, सब्बा	सब्बे

सब्बा शब्द (आकारांत स्त्रीलिंग) के रूप कञ्ञा शब्द के रूप के सदृश होंगे, केवल चतुर्थी षष्ठी के एकवचन में सब्बस्सा, बहुवचन में सब्बासं, सब्बासानं तथा सप्तमी के एकवचन में सब्बस्सं रूप होते हैं।

नपुंसकलिंग सब्ब शब्द के केवल प्रथमा, द्वितीया और संबोधन के रूपों में विशेषता है। अन्य सब रूप पुल्लिंग के समान होते हैं। प्र० द्वि०—ए० सब्बं; बहु०—सब्बानि संबोधन एक०—सब्ब, सब्बा; बहु०—सब्बानि।

कतर, कतम, उभय, इतर, अञ्ञ, अञ्ञतर, अञ्ञतम आदि शब्दों के रूप सब्ब शब्द के समान होते हैं।

संस्कृत में जिस प्रकार पूर्वादिगण के रूप में थोड़ी विशेषता पाई जाती है, ठीक उसी प्रकार पाली में भी पुब्ब, पर, अपर, दक्खिन, उत्तर शब्दों के सर्वत्र सब्ब शब्द के समान रूप होने पर भी प्रथमा और संबोधन के बहुवचन में और पंचमी और सप्तमी के एकवचन में विकल्प से बुद्ध शब्द के समान रूप होते हैं।

स्त्रीलिंग में—चतुर्थी, षष्ठी, सप्तमी—एक० में विकल्प से कञ्ञा शब्द के समान रूप होते हैं। इसी तरह नपुंसकलिंग में पञ्चमी और सप्तमी के एकवचन में विकल्प से चित्त शब्द के समान रूप होते हैं।

यद् शब्द (य)

य शब्द के रूप सर्वत्र सब्ब शब्द के समान होते हैं। यथा—पु० प्र० एक० यो—बहु० ये; द्वि० ए० यं—बहु० ये; तृ० ए० येन—बहु० येहि, येभि इत्यादि।

तद् (त)

त शब्द के पुल्लिंग के प्रथमा के एकवचन में सो, तथा स्त्रीलिंग प्रथमा के एकवचन में सा होता है—अन्यत्र सर्वत्र ही सब्ब शब्द के समान रूप होते हैं। केवल यह विशेषता है कि इसके पुल्लिंग और

स्त्रीलिंग के प्रथमा के एकवचन को छोड़कर सर्वत्र विकल्प से तकार के स्थान में नकार होता है।

[जिस प्रकार संस्कृत में द्वितीया विभक्ति में, तृतीया के एकवचन में तथा षष्ठी और सप्तमी के द्विवचन में एन होता है, उसी प्रकार इसमें सर्वत्र ही एनस्थानीय नकार होता है।]

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सो	ते, ने
द्वि०	तं, नं	ते, ने
तृ०	तेन, नेन	तेहि, तेभि, नेहि, नेभि इत्यादि।

मोग्गल्लान, प्रयोग, सिद्धि प्रभृति पालीव्याकरणकारों ने त शब्द के और भी रूपों का उल्लेख किया है। वे इस प्रकार हैं—

	एकवचन	अनेकवचन
तृ० पं०	तस्सा, नस्सा, ताय, नाय अस्सा	ताहि, ताभि, नाहि, नाभि
च० ष०	तस्साय, तस्सा, नस्साय, नस्सा, ताय, नाय, अस्साय, अस्सा, तिस्साय, तिस्सा	तासं, तासानं, नासं, नासानं आसं, आसानं, सानं
स०	तस्सं तस्सा, नस्सं, नस्सा, अस्सं, अस्सा, तिस्सं, तिस्सा, तायं, ताय, नायं, नाय	

एतद् (एत) शब्द

एत शब्द के पु० प्रथमा एक०—एसो; स्त्री० प्र० एक० एसा को छोड़कर सब लिंग और सब विभक्तियों में सब्ब शब्द के समान रूप होते हैं, केवल स्त्रीलिंग के तृतीया आदि के रूपों में कुछ विशेषता है, उसका उल्लेख नीचे किया जाता है—

तृ० पं० एक०		एताय, एतिस्सा
च० ष० एक०		एताय, एतिस्सा, एतिस्साय
स० एक०		एताय, एतिस्सं, एतस्सं, एतायं

इम (इदम्)

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अयं	इमे
द्वि०	इमं	इमे
तृ०	अनेन, इमिना	एहि, एभि, इमेहि, इमेभि
च०	अस्स, इमस्स	एसं, एसानं, इमेसं, इमेसानं
पं०	अस्मा, इमम्हा	एहि, एभि, इमेहि, इमेभि
ष०	अस्स, इमस्स	एसं, एसानं, इमेसं, इमेसानं
स०	अस्मिं, इमस्मिं, इमम्हि,	एसु, इमेसु

स्त्रीलिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अयं	इमा, इमायो
द्वि०	इमं	इमा, इमायो
तृ०	इमाय	इमाहि, इमाभि
च०	इमाय, इमिस्सा, इमिस्साय अस्सा, अस्साय	इमासं, इमासानं
पं०	इमाय	इमाहि, इमाभि
ष०	इमाय, इमिस्सा, इमिस्साय, अस्सा, अस्साय	इमासं, इमासानं
स०	इमायं, इमिस्सं, अस्सं	इमासु

नपुंसकलिंग

प्र० द्वि० एक० इदं, इमं; बहु० इमानि

अन्यत्र पुल्लिंग के समान रूप होते हैं।

किसी-किसी के मत में इम शब्द के पूर्वोक्त रूप से अतिरिक्त स्त्रीलिंग तृ पं० एकवचन में अस्सा और इमिस्सा; च० ष० बहुवचन में आसं तथा सप्तमी के एकवचन में इमाय भी रूप होते हैं।

अमुशब्द—(अदस्)

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	असु (असु)	अमू, अमुयो
द्वि०	असुं	अमू, अमुयो
तृ०	अमुना	अमूहि, अमूभि
च०	अमुने, अमुस्स	अमूसं, अमूसानं
पं०	अमुना, अमुस्मा, अमुम्हा	अमूहि, अमूभि
ष०	अमुनो, अमुस्स	अमूसं, अमूसानं
स०	अमुस्मि, अमुम्हि	अमूसु

स्त्रीलिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	असु, असु	अमू, अमुयो
द्वि०	असुं	अमू, अमुयो

	एकवचन	अनेकवचन
तृ०	अमुया	अमूहि, अमूभि
च०	अमुया, अमुस्सा	अमूसं, अमूसानं
पं०	अमुया	अमूहि, अमूभि
ष०	अमुया, अमुस्सा	अमूसं, अमूसामं
स०	अमुयं, अमुस्सं	अमूसु

नपुंसकलिंग में प्र० द्वि० ए० अमु—अनेकवचन—अमू को छोड़कर अन्य सब रूप पुल्लिंग के समान होते हैं।

किं शब्द (किम्)

किम् शब्द के स्थान में संस्कृत में क आदेश होता है, पाली में भी किं के स्थान में क आदेश होकर क शब्द अकारांत बन जाता है और उसके रूप सब्ब शब्द के समान होते हैं। विशेषता केवल यह है कि पुल्लिंग और नपुंसकलिंग के चतुर्थी और षष्ठी के एकवचन में वैकल्पिक रूप किस्स तथा सप्तमी के एकवचन में किस्मिं और किम्हि भी पाए जाते हैं।

किं शब्द

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	को	के
द्वि०	कं	के
तृ०	केन	केहि, केभि
च०	कस्स, किस्स	केसं, केसानं
पं०	कस्मा, कम्हा	केहि, केभि
ष०	कस्स, किस्स	केसं, केसानं
स०	कस्मिं, कम्हिं, किस्मिं, किम्हि	केसु

स्त्रीलिंग के रूप ठीक सब्बा शब्द के समान होते हैं। नपुंसकलिंग में—प्र० द्वि० एक० में कं, बहु० में कानि पद होता है। किसी-किसी के मत से प्र० द्वि० के एकवचन में किं पद होता है। अन्य सब विभक्तियों के रूप पुल्लिंग के समान होते हैं।

पाली में की शब्द कभी-कभी कु के स्थान में भी प्रयुक्त होता है। कहीं-कहीं कथं के अर्थ में भी को शब्द देखा जाता है।

पं० विधुशेखर भट्टाचार्य ने इस स्थल में उदाहरणस्वरूप 'को ते बलं महाराज', इत्यादि उद्धृत किया है।

तुम्ह शब्द—(युष्मत्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	त्वं, तुवं	तुम्हे
द्वि०	त्वं, तुवं, तवं, तं	तुम्हे, तुम्हाकं
तृ०	त्वया, तया	तुम्हेहि, तुम्हेभि
च०	तव, तुम्हं, तुम्हं	तुम्हाकं
पं०	त्वया, तया	तुम्हेहि, तुम्हेभि
ष०	तव, तुय्हं, तुम्हं	तुम्हाकं
स०	त्वयि, तयि	तुम्हेसु

किसी-किसी के मत से द्वि० एक० और बहु० में तुम्हं तथा पं० एक० में त्वम्हा रूप भी होते हैं।

इसके अतिरिक्त तृ० च० षष्ठी के एकवचन में ते तथा प्र० द्वि० तृ० च० षष्ठी के बहुवचनों में वो रूप भी होता है।

स्त्रीलिंग में भी यही रूप होंगे। ते और वो पद, संस्कृत के समान अपादादि में ही प्रयोग किए जाते हैं। पाद के आदि में इनका प्रयोग नहीं होता।

अम्ह शब्द—(अस्मद्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अहं	मयं, अम्हे
द्वि०	मं, ममं	अम्हाकं, अम्हे
तृ०	मया	अम्हेहि, अम्हेभि
च०	मम, ममं, मय्हं, अम्हं	अस्माकं, अम्हाकं
पं०	मया	अम्हेहि, अम्हेभि
ष०	मम, ममं, मय्हं, अम्हं	अस्माकं, अम्हाकं
स०	मयि	अम्हेसु

अन्य मत से—प्र० के बहुवचन में अस्मा, द्वि० के एकवचन में अम्हं, बहु० में अस्मा तथा सप्तमी बहु० में अस्मासु रूप भी पाए जाते हैं।

इनके अतिरिक्त तृ० च० ष० के एकवचन में मे तथा प्र० द्वि० तृ० च० और षष्ठी के बहुवचन में नो रूप भी पाया जाता है।

संख्या—शब्द

एक शब्द के रूप सर्वत्र ही सब्ब शब्द के समान होंगे।

संस्कृत में उभ शब्द नित्य द्विवचनांत है; पाली में द्विवचन के अभाव में यह शब्द बहुवचन में प्रयुक्त होता है, और इसके तीनों लिंगों के रूप समान होते हैं।

		बहुवचन
प्र०	द्वि०	उभो, उभे
तृ०	पं०	उभोहि, उभोभि, उभेहि, उभेभि
च०	ष०	उभिन्नं
स०		उभोसु, उभेसु

कति शब्द नित्य बहुवचनांत है, तथा इसके भी तीनों लिंगों में समान रूप होते हैं।

		बहुवचन
प्र०	द्वि०	कति
तृ०	पं०	कतीहि, कतीभि
च०	ष०	कतीनं, कतिन्नं
स०		कतीसु

द्वि शब्द

द्वि शब्द भी पाली में बहुवचनांत है और इसके भी रूप तीनों लिंगों में समान होते हैं।

		बहुवचन
प्र०	द्वि०	दुवे, द्वे
तृ०	पं०	द्वीहि, द्वीभि
च०	ष०	दुविन्नं, द्विन्नं
स०		द्वीसु

ति—(त्रि शब्द ; यह शब्द स्वभावतः बहुवचन है ।)

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग	नपुंसकलिंग
प्र० द्वि०	तयो	तिस्सो	तीणि
तृ० पं०	तीहि, तीभि	तीहि, तीभि	तीहि, तीभि
च० ष०	तिण्णं, तिण्णन्नं	तिस्सन्नं	तिण्णं तिण्णन्नं
स०	तीसु	तीसु	तीसु

यहाँ पर प्र० द्वि० में संस्कृत के रूपों का प्रभाव स्पष्ट प्रकट है। षष्ठी के रूप में भी संस्कृत की छाया विद्यमान है। किसी-किसी के मत में च० ष० के स्त्रीलिंग में तिस्सं, तिण्णन्नं रूप भी होते हैं।

चतु शब्द (चतुर्)

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग	नपुंसकलिंग
प्र० द्वि०	चत्तारो, चतुरो	चत्तस्सो	चत्तारि
	पुलिंग	स्त्रीलिंग	नपुंसकलिंग
तृ० पं०	चतूहि, चतूभि	चतूहि, चतूभि	चतूहि, चतूभि
च० ष०	चतुन्नं	चतस्सन्नं	चतुन्नं
स०	चतूसु	चतूसु	चतूसु

पंच शब्द के तीनों लिंगों में समान रूप होते हैं।

प्र० द्वि० पंच

तृ० पं० पंचहि, पंचभि

च० ष० पंचन्नं

स० पंचसु

छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, एकादस, द्वारस अथवा द्वादस वा बारस, तेरस वा तेळस, चतुद्दस वा चोद्दस, पंचदस वा पण्णरस, सोरस वा सोळस, सत्तदस वा सत्तरस तथा अट्ठादस वा अट्ठारस शब्दों के रूप इसी प्रकार समझने चाहिए।

विंशति प्रभृति नवति पर्यंत संख्या-वाचक शब्द संस्कृत में एकवचन होते हैं, उसी आधार पर पाली में भी इनके पर्यायवाचक शब्द एकवचन ही होते हैं।

एकूनवीसति प्रभृति शब्द स्त्रीलिंग हैं।

एकूनवीसति

एक	
प्र०—	एकूनवीसति
द्वि०	एकूनवीसतिं
तृ० च०, पं० ष०	एकूनवीसतिया
स०	एकूनवीसतिया, एकूनवीसतियं

तृतीया आदि में विकल्प से एकूनवीसत्या रूप भी होते हैं। वीसति, एकवीसति, द्वेवीसति, वा द्वावीसति, वा बावीसति इत्यादि ति प्रत्ययांत रूप इसी प्रकार होंगे।

विंशति प्रभृति संस्कृत शब्दों के स्थान में पाली में वीसति और वीसा एकवीसति; एकवीसा; द्वावीसति; द्वावीसा; तिंसति तिंसा, चत्तालीसति, चत्तालीसा इत्यादि दोनों रूप होते हैं।

इनमें ति प्रत्ययांत के रूप इकारांत रत्ति शब्द के समान तथा आकारांत वीसा प्रभृति के रूप—आकारांत स्त्रीलिंग के रूपों के समान होंगे। विशेषता केवल यह कि आकारांत वीसा प्रभृति शब्द के प्रथमा के एकवचन में वीसा, एकवीसा आदि के स्थान में वीसं एकवीसं आदि रूप दृष्टिगोचर होते हैं।

सत (शत), सहस्स, लक्ख आदि शब्द नपुंसक लिंग हैं, और इनके रूप वित्त शब्द के समान होंगे। तथा कोटि, पकोटि (प्रकोटि) प्रभृति स्त्रीलिंग शब्दों के रूप रत्ति शब्द के समान होंगे।

डुरोसील ने संख्या शब्द तथा उनके पूरणार्थकप्रत्ययांत रूपों की सूची दी है। पूरणार्थक अधिकतर संस्कृत के तम के स्थान में मकार से बनते हैं। कुछ संख्याएँ यहाँ दी जाती हैं—

		पूरणार्थक
१	एक	पठम
२	द्वे	दुतिय
३	तयो	ततिय
४	चत्तारो	चतुत्थ
५	पञ्च	पञ्चथ, पञ्चम
६	छ	छट्ठ, छट्ठम
७	सत्त	सत्थ, सत्तम
८	अट्ठ	अट्ठम
९	नव	नवम
१०	दस, रस, लस, लर	दसम
११	एकारस, एकादस	एकारसम, एकादसम
१२	बारस, द्वारस	बारसम
१३	तेदस, तेरस, तेळस	तेदसम
१४	चतुद्दस, चुद्दस	चतुद्दसम
१५	पञ्चदस, पञ्चरस, पन्नरस	पञ्चदसम
१६	सोळस, सोरस	ळसम
१७	सत्तदस, सत्तरस	सत्तरसम
१८	अट्ठदस, अट्ठरस	अट्ठदसम
१९	एकूनवीसति, एकूनवीसं	एकूनवीसतिम

२०	वीसति, वीसं	वीसतिम
२१	एकवीसति, एकवीसं	एकवीसतिम
३०	तिंसति, तिंसं	तिंसतिम
४०	चत्तालीसं, चत्तारीसं	चत्तालिसतिम
५०	पञ्चास, पञ्चासं	पञ्चासम
६०	सट्ठि	सट्ठिम
७०	सत्तति	सत्ततिम
८०	असीति	असीतिम
९०	नवुति	नवुतिम
१००	सतं	सतम
२००	बासतं, द्वासतं	बासतम
१०००	सहस्सं	सहस्सम

क्रिया-विभाग

संस्कृत के समान पाली में भी क्रियाओं के दो पद होते हैं; परस्मैपद और आत्मनेपद, जैसा कि इन पदों के नामकरण से प्रतीत होता है। क्रिया का फल यदि कर्ता को हो, तो आत्मनेपद, यदि कर्ता से अतिरिक्त किसी को हो, तो परस्मैपद होना चाहिए। संस्कृत में ही शनैः-शनैः इस नियम में शिथिलता आती गई और अंत में यह पद-विभाग प्रथा पर निर्भर हो गया। पाली में आते-आते इसमें और भी शिथिलता हो गई। कहने के लिये पाली में भी दो ही पद होते हैं, परंतु यथार्थ में आत्मनेपद का प्रयोग बहुत कम पाया जाता है। संस्कृत में जिस प्रकार अनुदात्त, ङित् आत्मनेपद का द्योतक है, स्वरित, ञित् परस्मैपद का परिचायक है, यह सब नियम पाली में कुछ नहीं है। पाली में प्रायः परस्मैपद का ही प्रयोग होता है। केवल कहीं-कहीं आत्मनेपद दृष्टिगोचर हो जाता है। यहाँ तक कि कर्मवाच्य, भाववाच्य, कर्मकर्तृवाच्य आदि प्रयोगों में जहाँ संस्कृत

में आत्मनेपद होना आवश्यक है, वहाँ भी पाली में प्रायः विकल्प पाया जाता है। संस्कृत की धातु पाठावली दस गणों में विभक्त है,। किंतु पाली में केवल सात गण ही माने गए हैं। अर्थात् भ्वादि, रुधादि, दिवादि, स्वादि, क्र्यादि, तनादि और चुरादि। संस्कृत के बाक़ी तीन गण—अदादि, तुदादि और जुहोत्यादि भ्वादि गण के अंतर्गत माने गए हैं।

संस्कृत में धातुगण दस प्रकार से प्रयुक्त होते हैं। लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ्; लिट्, लुट्, लृट्, आशीर्लिङ्, लुङ् और लृङ्। किंतु पाली में आशीर्लिङ् और लुट् का प्रयोग नहीं होता। इससे केवल आठ ही लकार रह जाते हैं। लिट् लकार का प्रयोग भी पाली में बहुत ही कम होता है। लङ् और लुङ् भूत काल द्योतित करते हैं। इनमें से भी प्रायः भूतकाल-मात्र द्योतित करने के लिये लुङ् के रूपों ही का पाली में प्रचुरता से प्रयोग पाया जाता है।

लट् लकार
भू धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवन्ति	भवते	भवन्ते
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथ	भवसे	भवव्हे
उत्तम पुरुष	भवामि	भवाम	भवे	भवाम्हे

नोट—भ्वादिगणीय धातु के उत्तर स्थित अकार (विकरण अकार) का विकल्प से लोप होता है, और उसके स्थान में एकार होता है, इस नियम के अनुसार भवेति, भवेन्ति आदि रूप भी हो सकते हैं।

भूधातु के स्थान में विकल्प से हू आदेश भी होता है—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	होति	होन्ति
म०	होसि	होथ
उ०	होमि	होम

इन उदाहरणों से प्रकट होगा कि लट् लकार के प्रत्यय संस्कृत के अनुसार ही होते हैं। केवल आत्मनेपद के मध्यमपुरुष बहुवचन में ध्वे के स्थान में व्हे होता है। यथा—

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एक०	बहु०	एक०	बहु०
प्र०	ति	अंति	ते	अंते (रे)
म०	सि	थ	से	व्हे
उ०	मि	म	ए	म्हे

संस्कृत में जिस प्रकार मि और म से पूर्व अकार दीर्घ हो जाता है, उसी प्रकार पाली में भी मि, म और म्हे के पूर्व स्थित अकार को दीर्घ हो जाता है।

पच, यज, वह, धम (ध्मा) आदि धातुओं के रूप इसी प्रकार होंगे।

ठा—(स्था)

संस्कृत में सार्वधातुक लकारों में स्था के स्थान में नित्य तिष्ठ आदेश होता है। पाली में उसका बिलकुल तिरस्कार नहीं हो सका, और ठा के स्थान में विकल्प से तिट्ठ आदेश होता है।

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ठाति, तिट्ठति	ठन्ति, तिट्ठन्ति
म०	ठासि, तिट्ठसि	ठाथ, तिट्ठथ
उ०	ठामि, तिट्ठामि	ठाम, तिट्ठाम

जुहोत्यादि गण की कुछ आकारांत धातुओं में द्वित्वकार्य का प्रभाव देखा

जाता है। अन्य सब आकारांत धातु ठा धातु के समान होंगी। गा और झा धातु क्रमशः गै और ध्यै धातु से बनी हैं, इसलिये इनके रूप गाति और झाति न होकर संस्कृत के ऐ के प्रभाव से आय् युक्त गायति, गायन्ति, झायति, झायन्ति इत्यादि होते हैं। संस्कृत का पाली पर प्रभाव कितना पड़ा है और पाली संस्कृत से अथवा संस्कृत पाली से निकली है, इस विषय पर विचार करनेवालों को इससे भी साहाय मिलेगा।

कभी-कभी सम्, उत्, प्रति, उ, नि उपसर्ग पूर्व रहने से ठा के स्थान में ठह आदेश हो जाता है, आगे जाकर हिंदी में यही बिना उपसर्ग के भी ठहरना बन जाता है। उदाहरण—संठहति, संठाति, उट्ठहति, उट्ठाति इत्यादि।

कभी-कभी अधि और उत् उपसर्ग के साथ ठा धातु के आकार के स्थान में एकार होता है। अधिट्ठेन्ति; उट्ठेन्ति। पा धातु के स्थान में भी विकल्प से पिव आदेश होता है तथा पिव का वकार भी विकल्प से बकार हो जाता है।

पिवति, पिबति, पाति; पिवन्ति, पिबन्ति, पन्ति आदि।

दिस (दृश्) धातु के स्थान में विकल्प से पस्स, दिस्स और दक्ख आदेश होते हैं। पस्सति, पस्सन्ति; दिस्सति, दिस्संति; दक्खति, दक्खन्ति इत्यादि।

गम धातु के स्थान में विकल्प से गच्छ और घम्म आदेश होते हैं। गच्छति, गच्छन्ति; घम्मति, घम्मन्ति; गमेन्ति, गमेन्ति इत्यादि रूप होते हैं।

वद धातु के स्थान में विकल्प से वज्ज आदेश होता है। यथा—

वज्जति, वज्जन्ति; वज्जेति, वदति, वदन्ति, वदेति, वदेन्ति इत्यादि।

यम धातु के स्थान में विकल्प से यच्छ होता है। यथा—

यच्छति, यच्छन्ति, यमति, यमन्ति इत्यादि।

सद धातु के स्थान में सीद आदेश होता है। यथा—सीदति, सीदन्ति इत्यादि।

जि धातु के रूप संस्कृत के समान जयति, जयन्ति आदि भी होते हैं और विकल्प से जेति, जेन्ति आदि रूप भी होते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में एक ही धातु कभी-कभी भिन्न-भिन्न गणों में पाई जाती हैं, उसी प्रकार पाली में भी कोई-कोई धातु भिन्न-भिन्न गणों में मिलती हैं। जि धातु इसका एक उदाहरण है। इसके रूप क्र्यादि गण के विकरण सहित भी मिलते हैं। यथा—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जिनाति	जिनन्ति
म०	जिनासि	जिनाथ
उ०	जिनामि	जिनाम

नी धातु के रूप भी दो प्रकार के होते हैं—नयति, नयन्ति और नेति, नेन्ति इत्यादि।

सर (सृ) के रूप—सरति, सरन्ति—आदि होते हैं।

दूसरे-दूसरे गणों की संस्कृत की ऋकारांत अन्य धातुओं के भी रूप प्रायः इसी प्रकार होते हैं।

ऊपर कहे गए गच्छ आदि आदेश संस्कृत में यद्यपि केवल लट्, लोट्, विधिलिङ् और लङ् में ही होते हैं, परंतु पाली में सभी लकारों में ये आदेश पाए जाते हैं। यहाँ तक कि कभी-कभी ये सब आदेश कृत् प्रत्ययों तक में पाए जाते हैं। विकरण के संबंध में भी यही नियम है। पाली के अकार यकार आदि विकरण—लट् आदि सर्वधातुक लकारों में ही बद्ध नहीं रहते किंतु सभी लकारों में होते हैं।

अदादि गण धातु

पाली में जैसा कि पहले लिखा गया है केवल सात गण होते हैं। और अदादि जुहोत्यादि तथा तुदादि गण की संपूर्ण धातुओं का

समावेश भ्वादिगण में कर दिया गया है। परंतु यथार्थ में संस्कृत में अदादि, जुहोत्यादि प्रभृति गणों में गण प्रयुक्त जो विकार होते हैं, उनका आभास पाली तक में पहुँचता है, और अतः वे भ्वादिगण से पृथक्-सी स्पष्ट प्रतीत होती है। इसलिये सुविधा के हेतु इनका यहाँ पृथक् निर्देश करना ही उचित प्रतीत होता है।

इ धातु—(गमनार्थक)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	एति	एन्ति, यन्ति
म०	एसि	एथ
उ०	एमि	एम

या धातु के रूप याति, यन्ति आदि; वा धातु के वाति, वन्ति; भा के भाति, भन्ति; पा के पाति, पन्ति आदि होंगे।

ब्रू धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ब्रूते	ब्रुवन्ते
म०	ब्रूसे	ब्रूव्हे
उ०	ब्रुवे	ब्रूम्हे

सी (शी) धातु के रूप विकल्प से भ्वा और अदादि दोनों गणों के अनुसार मिलते हैं। यथा—सयति, सयन्ति आदि तथा—सेति, सेन्ति; सेते, सेन्ते इत्यादि।

अस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अत्थि	सन्ति
म०	असि, अहि	अत्थ
उ०	अस्मि, अम्हि	अस्म, अम्ह

आस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अच्छति	अच्छन्ति
म०	अच्छसि	अच्छथ
उ०	अच्छामि	अच्छाम

उप पूर्वक आस धातु के रूप उपासत्ति, उपासन्ति आदि होते हैं।

हन धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	हनति, हन्ति	हनन्ति
म०	हनसि (कहीं-कहीं हनासि)	हनथ
उ०	हनामि	हनाम

हन धातु के स्थान में विकल्प से वध आदेश होता है। उस दशा में उसके रूप वधति, वधन्ति इत्यादि होंगे।

वच धातु के वचति, वचन्ति इत्यादि रूप होते हैं। कभी-कभी प्रथम पुरुष के एकवचन में वत्ति रूप भी मिलता है।

दुह धातु के दुहति, दुहन्ति आदि रूप होते हैं। तथा विकल्प से दोहति, दोहन्ति आदि रूप भी मिलते हैं।

लिह धातु के रूप लिहति, लिहन्ति आदि तथा विकल्प से लेहति लेहन्ति आदि होते हैं।

रुद धातु के रुदति, रुदन्ति आदि तथा विकल्प से रोदति, रोदन्ति आदि रूप होते हैं।

विद धातु के विदति, विदन्ति आदि रूप होते हैं।

तुदादिगण

पुच्छ धातु—पुच्छति, पुच्छन्ति इत्यादि। इस (इष) धातु के स्थान में विकल्प से इच्छ आदेश होता है। यथा—इच्छति, इच्छन्ति आदि। विकल्प पक्ष में—एसति, एसन्ति आदि रूप होते हैं।

गिर, गिल (गृ)—गिरति, गिरन्ति, गिलति, गिलन्ति इत्यादि ।

मर (मृङ्) धातु के स्थान में विकल्प से मीय्य और मीय आदेश होते हैं । यथा—मीय्यति, मीय्यन्ति, मीयति, मीयन्ति, मरति, मरन्ति इत्यादि ।

सिच धातु—सिञ्चति, सिञ्चन्ति आदि ।

लिप—लिम्पति, लिम्पन्ति इत्यादि ।

नोट—हिंदी में आकर लिम्पति का मकार लुप्त हो गया, और केवल लीपना रूप रह गया ।

मुच—मुञ्चति, मुञ्चन्ति इत्यादि ।

विद—विन्दति, विन्दन्ति ।

फुस (स्पृश)—फुसति, फुसन्ति इत्यादि ।

दिवादिगण

संस्कृत के समान पाली में भी दिवादिगण में धातु के उत्तर य विकरण होता है । परंतु यह यकार जन, दा इत्यादि थोड़ी-सी धातुओं में ही प्रत्यक्ष दिखाई देता है । अधिकांश धातुओं में संधि होकर उसे पूर्व रूप हो जाता है । यथा दिव—दिव + य + ति = दिब्बति ।

दिव धातु—दिब्बति, दिब्बन्ति आदि ।

सिव—सिब्बति, सिब्बन्ति आदि ।

युध—युज्झति, युज्झन्ति इत्यादि ।

बुध—बुज्झति, बुज्झन्ति इत्यादि ।

हिंदी में आकर यही बूझना हो जाता है ।

कुध—कुज्झति, कुज्झन्ति इत्यादि ।

विध (व्यध)—विज्झति, विज्झन्ति इत्यादि ।

पद—पज्जति, पज्जन्ति इत्यादि ।

नह—नय्हति, नय्हन्ति आदि । ह के साथ यकार के संयोग से दोनों में स्थान-परिवर्तन हो जाता है ।

तुस (तुष्)—तुस्सति, तुस्सन्ति आदि ।

मन—मञ्ञति, मञ्ञन्ति इत्यादि ।

सम (शम्)—सम्मति, सम्मन्ति इत्यादि । जन धातु के स्थान में संस्कृत के समान ही जा आदेश होता है । जायते, जायन्ते आदि ।

दा धातु—दीयति, दीयन्ति आदि ।

जर (जॄ)—धातु के रूप में विशेषता है—

जीय्यति, जीय्यन्ति । किसी-किसी के मत से जिय्यति, जिय्यन्ति तथा विकल्प से जीरति, जीरन्ति, और जरति, जरन्ति आदि रूप होते हैं ।

रुधादिगण

संस्कृत में जहाँ श्नम् विकरण होने से छिनत्ति इत्यादि रूप होते हैं; पाली में छिन्दति, रुन्धति आदि रूप होते हैं। यहाँ भ्वादि-गण के समान अकार धातु के अंत में विकरण स्वरूप आता है, और धातु के पूर्व स्वर के अनंतर अनुस्वार होता है, और उस अनु-स्वार को अपने परवर्ती व्यंजन के अनुसार पर सवर्ण होता है। जैसे—भिन्दति, रुन्धति, छिन्दति, भुञ्जति इत्यादि ।

रुधादिगण के विकरण में एक और विशेषता है । जहाँ अ विकरण कहा गया है, वहाँ इ ई ए तथा ओ भी विकरण स्वरूप प्रयुक्त हुए हैं । अतः इस गण की धातुओं के पाँच भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप उपलब्ध होते हैं । यथा—

रुध

प्रथमपुरुष एकवचन—रुन्धति, रुन्धिति, रुन्धीति, रुन्धेति, रुन्धोति ।

,, बहुवचन—रुन्धन्ति, रुन्धिन्ति, रुन्धेन्ति, रुन्धोन्ति ।

भिद्

,, भिन्दति, भिन्दिति, भिन्दीति, भिन्देति, भिन्दोति आदि ।

छिद

प्रथमपुरुष छिन्दति, छिन्दिति, छिन्दीति, छिन्देति, छिन्दोति आदि।

भुज

„ भुञ्जति, भुञ्जिति, भुञ्जीति, भुञ्जेति, भुञ्जोति इत्यादि।

युज

„ युञ्जति, युञ्जिति, युञ्जीति, युञ्जेति, युञ्जोति इत्यादि।

स्वादिगण

स्वादिगण की धातुओं के अनंतर साधारणतः णु विकरण होता है, पर किसी-किसी धातु से णा तथा उणा प्रत्यय भी होते हैं। गुण होने से णु के स्थान में णो हो जाता है।

सु (श्रु) धातु

	(क) एकवचन	(क) बहुवचन	(ख) एकवचन	(ख) बहुवचन
प्र०	सुणोति	सुणोन्ति	सुणाति	सुणन्ति
म०	सुणोसि	सुणोथ	सुणासि	सुणाथ
उ०	सुणोमि	सुणोम	सुणामि	सुणाम

हि धातु प्रायः प (प्र) पूर्वक—पहिणोति, पहिणाति, पहिणन्ति इत्यादि।

वु (वृ) धातु—वुणोति, वुणाति, वुणन्ति इत्यादि।

कभी-कभी वणोति प्रयोग भी पाया जाता है।

मि—मिनोति, मिनाति, मिनन्ति आदि।

प पूर्वक अप (प्र आप्)

इसके रूप भी पापुणाति, पापुणन्ति तथा पापुणोति, पप्पोति इत्यादि होते हैं।

सक् (शक्) धातु

सक्कुणाति, सक्कुणन्ति इत्यादि। विकल्प से सक्कोति, सक्कोन्ति इत्यादि।

क्रयादि गण

क्रयादिगण की धातुओं में ना प्रत्यय होता है, और धातु का आदि स्वर यदि दीर्घ हो तो ह्रस्व हो जाता है।

क्री धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	किणाति	किणन्ति
म०	किणासि	किणाथ
उ०	किणामि	किणाम

धू धातु—धुनाति, धुनन्ति इत्यादि।

लू धातु—लुनाति, लुनन्ति इत्यादि।

अस् (अश भक्षणे) धातु—अस्नाति, अस्नन्ति इत्यादि।

जा—ज्ञा धातु के स्थान में जा आदेश होता है। यथा—जानाति, जानन्ति इत्यादि।

गह—गण्हाति, गण्हन्ति, गण्हति, गण्हन्ति इत्यादि।

तथा—घेप्पति, घेप्पन्ति इत्यादि रूप भी होते हैं।

मा—मा धातु के आकार के स्थान में इकार होता है। यथा—मिनाति, मिनन्ति इत्यादि।

तनादिगण

तनादिगण की धातुओं में उ प्रत्यय (विकरण) होता है। उ के स्थान में गुण होने से ओ होता है।

तन धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनोति	तनोन्ति
म०	तनोसि	तनोथ
उ०	तनोमि	तनोम

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनुते	तन्वन्ते
म०	तनुसे	तनुव्हे
उ०	तन्वे	तनुम्हे

कर (कृ) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	करोति	करोन्ति, कुब्बन्ति
म०	करोसि	करोथ
उ०	करोमि	करोम

आत्मनेपद

प्र०	कुरुते	कुब्बन्ते
म०	कुरुसे	कुरुव्हे
उ०	कुब्बे	कुरुम्हे

कर धातु से उत्तर विकल्प से यिर प्रत्यय होता है और उसके परे कर के रकार का लोप हो जाता है। यथा—कयिरति, कयिरन्ति, कयिरसि, कयिरथ इत्यादि।

जुहोत्यादिगण

हु धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जुहोति, जुह्वति	जुहोन्ति, जुह्वन्ति
म०	जुहोसि, जुह्वसि	जुहोथ, जुह्वथ
उ०	जुहोमि, जुह्वामि	जुहोम, जुह्वाम

कभी-कभी जुह्वति; जुह्वन्ति इत्यादि रूप भी मिलते हैं।

हा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जहाति	जहन्ति
म०	जहासि	जहाथ
उ०	जहामि	जहाम

दा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददाति, दज्जति, देति	ददन्ति, दज्जन्ति, देन्ति
म०	ददासि, दज्जसि, देसि	ददाथ, दज्जथ, देथ
उ०	ददामि, दज्जामि, देमि, दम्मि	ददाम, दज्जाम, देम, दम्म

धा धातु—दधाति, दधन्ति इत्यादि तथा विकल्पपक्ष में धेति, धेन्ति इत्यादि।

उपसर्ग सहित धा धातु के द्वित्व होने पर द्वितीय ध के स्थान में कभी-कभी ह होता है। यथा—पिदहति, पिदहन्ति इत्यादि। सद्दहति (श्रद्धाति), सद्दहन्ति।

चुरादिगण

चुरादिगण की धातु में अय प्रत्यय होता है और अय के स्थान में विकल्प से ए होता है।

चुर धातु—चोरयति, चोरयन्ति; चोरेति, चोरेन्ति इत्यादि।

चिंत धातु—चिन्तयति, चिन्तेति, चिन्तयन्ति, चिन्तेन्ति आदि।

गण धातु—गणयति, गणेति, गणयन्ति, गणेन्ति आदि।

मंत धातु—मन्तयति, मन्तेति इत्यादि।

विद—वेदयति, वेदेति इत्यादि तथा वेदियति, वेदियन्ति आदि रूप भी पाए जाते हैं।

घट—घाटयति, घाटेति, घटयति, घटेति आदि।

लोट् लकार

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भवतु	भवन्तु
म०	भव, भवाहि	भवथ
उ०	भवामि	भवाम

आत्मनेपद

प्र०	भवतं	भवन्तं
म०	भवस्सु	भवव्हो
उ०	भवे	भवामसे

भू धातु के स्थान में हू आदेश होने पर होतु, होन्तु, होहि, होथ इत्यादि रूप होंगे।

ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट होगा कि लोट् लकार प्रायः संस्कृत के ही समान पाली में भी होता है। मध्यम पुरुष के एकवचन में संस्कृत में केवल भव होता है, परंतु पाली में हि का लोप विकल्प से होता है, और भवाहि रूप भी होता है। मध्यम पुरुष के बहुवचन में पाली में भवथ होता है।

आत्मनेपद के रूप में विशेष अंतर है। उत्तम पुरुष के बहुवचन में भवामसे रूप विशेष ध्यान देने योग्य है।

अस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अत्थु	सन्तु
म०	आहि	अत्थ
उ०	अस्मि, अम्हि	अस्म, अम्ह

गम धातु—गच्छतु, गमेतु, धम्मतु इत्यादि।

दिस (दृश्) धातु—पस्सतु, दिस्सतु, दक्खतु इत्यादि ।

ब्रू धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ब्रूतु	ब्रुवन्तु
म०	ब्रूहि	ब्रूथ
उ०	ब्रूमि	ब्रूम

आत्मनेपद में ब्रूतं, ब्रुवंतं इत्यादि ।

दा धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददातु	ददन्तु
म०	ददाहि	ददाथ
उ०	ददामि	ददाम

विकल्प से देतु, देन्तु ; दज्जतु, दज्जन्तु इत्यादि रूप होते हैं ।

आत्मनेपद

प्र०	ददतं	ददन्तं
म०	ददस्सु	ददव्हो
उ०	ददे	ददामसे

हु धातु—जुहोतु, जुहोन्तु, जुह्वन्तु इत्यादि ।

कर (कृ) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	करोतु, कुरुतु	करोन्तु, कुब्बन्तु
म०	करोहि, कुरु	करोथ
उ०	करोमि	करोम

आत्मनेपद

प्र०	कुरुतं	कुब्बन्तं
म०	कुरुस्सु, कुरस्सु	कुरुव्हो
उ०	कुब्बे	कुब्बामसे

गह (ग्रह)—गरहतु, गरहन्तु, गरहाहि, गरहाथ, गरहामि, गरहाम इति ।

जा (ज्ञा) परस्मैपद—प्र० जानातु, जानन्तु । म० जान, जानाहि, जानाथ । उ० जानामि, जानाम ।

आत्मनेपद—जानतं, जानन्तं इत्यादि ।

विधिलिङ्

प्रत्यय

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	एय्य, ए	एय्युं	एथ	एरं
म०	एय्यासि, ए	एय्याथ	एथो	एय्यव्हो
उ०	एय्यामि, ए	एय्याम	एय्यं, ए	एय्याम्हे

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भवेय्य, भवे	भवेय्युं
म०	भवेय्यासि, भवे	भवेय्याथ
उ०	भवेय्यामि, भवे	भवेय्याम

आत्मनेपद

प्र०	भवेथ	भवेरं
म०	भवेथो	भवेय्यव्हो
उ०	भवेय्यं, भवे	भवेय्याम्हे

भू धातु के स्थान में जब हू आदेश होता है, तब हुवेय्य, हवेय्युं इत्यादि रूप होंगे। सर्वत्र भ के स्थान में ह हो जायगा। वैकल्पिक रूप हेय्य, हेय्युं, हेय्यासि, हेय्याथ, हेय्यामि, हेय्याम और कहीं-कहीं हुवेय्यामि भी होते हैं।

गम धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	गच्छेय्य, गच्छे	गच्छेय्युं
म०	गच्छेय्यासि, गच्छे	गच्छेय्याथ
उ०	गच्छेय्यामि, गच्छे	गच्छेय्याम

इसी प्रकार गमेय्य, गमे, गमेय्युं इत्यादि।

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	गच्छेथ	गच्छेरं
म०	गच्छेथो	गच्छेय्यव्हो
उ०	गच्छेय्यं, गच्छे	गच्छेय्याम्हो

वद प्रभृति धातुओं के रूप भी इसी प्रकार होंगे। केवल वद के स्थान में प्रथमपुरुष बहुवचन में वज्जु, वज्जुं तथा मध्यमपुरुष एकवचन में वज्जासि, वज्जेसि रूप भी होते हैं।

ठा (स्था) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तिट्ठेय्य, ठेय्य	तिट्ठेय्युं, ठेय्युं
म०	तिट्ठेय्यासि, ठेय्यासि	तिट्ठेय्याथ
उ०	तिट्ठेय्यामि, ठेय्यामि	तिट्ठेय्याम, ठेय्याम

दा धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददेय्य, ददे	ददेय्युं
म०	ददेय्यासि	ददेय्याथ
उ०	ददेय्यामि	ददेय्याम

इसी तरह देय्य देय्युं इत्यादि रूप भी होते हैं। जब दा के स्थान में दज्ज आदेश होता है, तब दज्जेय्य, दज्जे—दज्जेय्युं आदि रूप होते हैं।

प्रथम पुरुष के एकवचन में दज्जा (दद्यात्), बहुवचन में दज्जं एवं उत्तमपुरुष के एकवचन में दज्जं (दद्याम) पद भी होते हैं।

आत्मनेपद में ददेथ, ददेरं इत्यादि रूप होते हैं। तथा द्वित्व न होने पर देय्य, देय्युं, देय्यासि आदि रूप भी होते हैं।

धा धातु के रूप—दधेय्य, दधे इत्यादि होते हैं।

अपि उपसर्ग पूर्वक धा धातु के रूप होंगे—पिदहेय्य, पिदहे आदि।

नोट—संस्कृत में भागुरि आचार्य के मत से अव और अपि के अकार का लोप हो जाता है, और तदनुसार अपिधान, अवगाहन आदि के स्थान में पिधान, वगाहन आदि रूप होते हैं। मतांतर से लोप नहीं होता। अतः अकार का लोप विकल्प से होता है। यहाँ संस्कृत के प्रयोग का पाली पर पूर्ण प्रभाव पड़ा है।

हु धातु—जुहेय्य, जुहे, जुहेय्युं इत्यादि।

हा धातु—जहेह, जहे, जहेय्युं इत्यादि।

अस धातु (अदादिगणी)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अस्स, सिया	अस्सु, सियुं
म०	अस्स	अस्सथ
उ०	अस्सं	अस्साम

ब्रू धातु (परस्मैपद)

प्र०	ब्रुवेय्य, ब्रुवे	ब्रुवेय्युं
म०	ब्रुवेय्यासि	ब्रुवेय्याथ
उ०	ब्रुवेय्यामि	ब्रुवेय्याम

आत्मनेपद में ब्रुवेथ, ब्रुवेर, मध्यम पुरुष ब्रुवेथो, ब्रुवेय्यव्हो, उत्तम पुरुष ब्रुवेय्यं, ब्रुवे, ब्रुवेय्याम्हे रूप होते हैं।

तन धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनेय्य, तने	तनेय्युं
म०	तनेय्यासि	तनेय्याथ
उ०	तनेय्यामि	तनेय्याम

कर धातु—कृ
परस्मैदपद

(क)

प्र०	करेय्य, करे	करेय्युं
म०	करेय्यासि	करेय्याथ
उ०	करेय्यामि	करेय्याम

	(ख)		(ग)	
प्र०	कयिरा	कयिरुं	कुब्बेय्य, कुब्बे	कुब्बेय्युं
म०	कयिरासि	कयिराथ	कुब्बेय्यासि	कुब्बेथ
उ०	कयिरामि	कयिराम	कुब्बेय्य	कुब्बेय्याम

नोट—करेयु, कयिरुं और कुब्बयुं के स्थान में यथाक्रम करेय्यं, कयिरं और कुब्बेय्यं रूप होते हैं तथा ख प्रणाली में मध्यम और उत्तम पुरुष के एकवचनों में भी कयिरा रूप होता है। यह डुरोसील का मत है।

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	कुब्बेथ, कब्बेथ, कयिराथ,	कुब्बेरं
म०	कुब्बेथो	कुब्बेय्यव्हो
उ०	कुब्बे, करे, करेय्यं	कुब्बेय्याम्हे

की (क्री) धातु—किणेय्य, किणे, किणेय्युं इत्यादि।

गह (ग्रह) धातु—गण्हेय्य, गण्हे, गण्हेय्युं इत्यादि।

जा (ज्ञा) धातु—जानेय्य, जाने, जानेय्युं इत्यादि।

इसके अतिरिक्त प्रथमपुरुष में जानिया, जञ्ञा तथा जानेय्याति और उत्तमपुरुष एकवचन में जानेमु रूप भी होते हैं।

छिद धातु—छिंदेय्य, छिंदे, छिंदेय्युं इत्यादि।

या धातु—यायेय्य, यायेय्युं इत्यादि।

नह (स्ना)—न्हायेय्य, न्हायेय्युं इत्यादि।

नि+वा—निब्बायेय्य, निब्बायेय्युं इत्यादि।

परोक्खा (परोक्षा)—लिट्

प्रत्यय

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अ	उ	त्थ	रे
म०	ए	त्थ	त्थो	व्हो
उ०	अ	म्ह	इ	म्हे

पाली में लिट् लकार का प्रयोग बहुत कम होता है। जिस प्रकार संस्कृत में द्वित्व होता है, उसी प्रकार पाली में भी द्वित्व होता है।

पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर के स्थान में ह्रस्व, पूर्ववर्ती कवर्ग के स्थान में चवर्ग, वर्ग के द्वितीय और चतुर्थ वर्ण के स्थान में क्रमशः प्रथम और तृतीय वर्ण तथा हकार के स्थान में जकार इत्यादि आदेश संस्कृत के ही अनुसार पाली में भी होते हैं। व्यंजनादि प्रत्यय के परे धातु के अनंतर इकार आगम होता है।

भू धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	बभूव	बभूव	बभूवित्थ	बभूविरे
म०	बभूवे	बभूवित्थ	बभूवित्थो	बभूविव्हो
उ०	बभूव	बभूविम्ह	बभूवि	बभूविम्हे

पच धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	पपच	पपचु	पपचित्थ	पपचिरे
म०	पपचे	पपचित्थ	पपचित्थो	पपचिव्हो
उ०	पपच	पपचिम्ह	पपचि	पपचिम्हे

गम धातु

प्र०	जगम, जगाम	जगमु	जगमित्थ	जगमिरे
म०	जगमे	जगमित्थ	जगमित्थो	जगमिव्हो
उ०	जगम	जगमिम्ह	जगमि	जगमिम्हे

ब्रू धातु के प्रथमपुरुष एकवचन में आह तथा बहुवचन में आहु तथा आहंसु—रूप होते हैं।

भविस्सन्ती (भविष्यन्ती) लट्

इस लकार में संस्कृत के स्य के स्थान में स्स होता है और प्रत्यय सब वर्त्तमान के समान होते हैं।

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	स्सति	स्सन्ति	स्सते	स्सन्ते
म०	स्ससि	स्सथ	स्ससे	स्सव्हे
उ०	स्सामि	स्साम	स्सं	स्साम्हे

किसी-किसी के मत से आत्मनेपद के प्रथमपुरुष के बहुवचन में स्सरे प्रत्यय भी देखा जाता है।

लृट् लकार में धातुओं के बाद प्रायः इ होता है।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भविस्सति	भविस्सन्ति
म०	भविस्ससि	भविस्सथ
उ०	भविस्सामि	भविस्साम

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भविस्सते	भविस्सन्ते
म०	भविस्ससे	भविस्सव्हे
उ०	भविस्सं	भविस्साम्हे

भू के स्थान में हू आदेश होने से निम्न-लिखित रूप होते हैं। (हू के उकार के स्थान में विकल्प से ए, एह और आह आदेश होते हैं, तथा उनके बाद भविष्यत् के स्स विकरण का विकल्प से लोप होता है।)

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
	(क)		(ख)	
प्र०	हेति	हेन्ति	हेस्सति	हेस्सन्ति
म०	हेसि	हेथ	हेस्ससि	हेस्सथ
उ०	हेमि	हेम	हेस्सामि	हेस्साम

	(ग)		(घ)	
प्र०	हेहिति	हेहिन्ति	हेहिस्सति	हेहिस्सन्ति
म०	हेहिसि	हेहिथ	हेहिस्ससि	हेहिस्सथ
उ०	हेहामि	हेहाम	हेहिस्सामि	हेहिस्साम
	(ङ)		(च)	
प्र०	होहिति	होहिन्ति	होहिस्सति	होहिस्सन्ति
म०	होहिसि	होहिथ	होहिस्ससि	होहिस्सथ
उ०	होहामि	होहाम	होहिस्सामि	होहिस्साम

नोट—किसी-किसी के मत से उत्तम पुरुष एकवचन में हेश्रामि और होयामि तथा बहुवचन में हेश्राम और होश्राम रूप भी होते हैं।

दिस (दृश्) धातु

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
	(क)		(ख)	
प्र०	दक्खिति	दक्खिन्ति	दक्खिस्सति	दक्खिस्सन्ति
म०	दक्खिसि	दक्खिथ	दक्खिस्ससि	दक्खिस्सथ
उ०	दक्खामि	दक्खाम	दक्खिस्सामि	दक्खिस्साम
	(ग)		(घ)	
प्र०	दक्खति	दक्खन्ति	पस्सिस्सति	पस्सिस्सन्ति
म०	दक्खसि	दक्खथ	पस्सिस्ससि	पस्सिस्सथ
उ०	दक्खामि	दक्खामि	पस्सिस्सामि	पस्सिस्साम

सक धातु

सक्खिस्सति, सक्खिस्सन्ति आदि परस्मैपद।

सक्खिते, सक्खिन्ते इत्यादि आत्मनेपद।

वच—वक्खति, वक्खन्ति इत्यादि।

मुच—मोक्खति, मोक्खन्ति इत्यादि।

भुज—भोक्खति, भोक्खन्ति इत्यादि ।

वस—वच्छति, वच्छन्ति ।

रुद—रुच्छति, रोदिस्सति, रुच्छन्ति, रोदिस्सन्ति ।

लभ—लच्छति, लभिस्सति, लच्छन्ति, लभिस्सन्ति ।

गम—गच्छिस्सति, गमिस्सति, गच्छिस्सन्ति, गमिस्सन्ति ।

छिद—छेच्छति छिन्दिस्सति, छेच्छन्ति छिन्दिस्सन्ति ।

रुध—रुन्धिस्सति, रुन्धिस्सन्ति।

जन—जायिस्सति, जनिस्सति, जायिस्सन्ति, जनिस्सन्ति ।

जा (ज्ञा)—ञस्सति, जानिस्सति, ञस्सन्ति, जानिस्सन्ति ।

जि—जेस्सति, जिनिस्सति, जेस्सन्ति, जिनिस्सन्ति ।

की (क्री)—केस्सति, किणिस्सति, केस्सन्ति, किणिस्सन्ति ।

सु (श्रु)—सोस्सति, सुणिस्सति, सोस्सन्ति, सुणिस्सन्ति ।

गह (ग्रह)—गण्हिस्सति, गहेस्सति, गण्हिस्सन्ति, गहेस्सन्ति ।

दा—दस्सति, ददिस्सति, दज्जिस्सति, दस्सन्ति, ददिस्सन्ति, दज्जिस्सन्ति ।

धा—धस्सति ।

अपि उपसर्ग सहित—पिदहिस्सति ।

परि पूर्वक—परिदहेस्सति ।

इ (गतौ)—एस्सति, एस्सन्ति ।

जर—जीरिस्सति, जीरिस्सन्ति ।

मर—मरिस्सति, मरिस्सन्ति।

कर (कृ)—करिस्सति, करिस्सन्ति ।

तथा

प्र०	काहति	काहन्ति
म०	काहसि	काहथ
उ०	काहामि	काहाम

तथा

काहिति, काहिन्ति इत्यादि इकार सहित भी रूप होते हैं। नह (स्ना) नहायिस्सति, नहायिस्सन्ति । परि + नि + वा धातु—परिनिब्बायिस्सति, परिनिब्बायिस्सन्ति ।

आत्मनेपद—उत्तमपुरुष एकवचन परिनिब्बिस्सं ।

कालातिपत्ति (कालातिपत्तिः) लृङ्

प्रत्ययगण

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	स्सा	स्संसु	स्सथ	स्सिंसु
म०	स्से	स्सथ	स्ससे	स्सव्हे
उ०	स्सं	स्सम्हा	स्सं	स्साम्हसे

कभी कभी परस्मैपद प्रथमपुरुष एकवचन स्सा तथा मध्यम पुरुष एकवचन स्से के स्थान में स्स होता है । एवं उत्तम पुरुष बहुवचन स्सम्हा के स्थान में स्सम्ह भी होता है ।

संस्कृत के सदृश पाली में भी लृङ् लकार में धातु से पूर्व अकार का आगम होता है । परंतु कहीं-कहीं उसका लोप भी देखा जाता है । अन्य सब कार्य लृट् के समान होते हैं ।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभविस्सा, अभविस्स	अभविस्संसु
म०	अभविस्से, अभविस्स	अभविस्सथ
उ०	अभविस्सं	अभविस्सम्हा, अभविस्सम्ह

अकार के लोप होने पर भविस्स, भविस्संसु आदि रूप होंगे ।

आत्मनेपद

प्र०	अभविस्सथ	अभविस्सिंसु
म०	अभविस्ससे	अभविस्सव्हे
उ०	अभविस्सं	अभविस्साम्हसे

गम धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छिस्सा, अगच्छिस्स	अगच्छिस्संसु
म०	अगच्छिस्से, अगच्छिस्स	अगच्छिस्सथ
उ०	अगच्छिस्सं	अगच्छिस्सम्हा

अन्यान्य धातुओं के रूप भी इसी प्रकार होंगे। यथा—

पच धातु

	परस्मैपद एकवचन	परस्मैपद बहुवचन	आत्मनेपद एकवचन	आत्मनेपद बहुवचन
प्र०	अपचिस्सा, अपचिस्स	अपचिस्संसु	अपचिस्सथ	अपचिस्सिंसु
म०	अपचिस्से, अपचिस्स	अपचिस्सथ	अपचिस्ससे	अपचिस्सव्हे
उ०	अपचिस्सं	अपचिस्सम्हा	अपचिस्सं	अपचिस्साम्हसे

परस्मैपद—प्रथम और मध्यम पुरुष एकवचन में क्रमशः अपचिस्सति और अपचिस्ससि रूप भी होते हैं।

हीयत्तनी (ह्यस्तनी) लङ्

प्रत्यय

	परस्मैपद एकवचन	परस्मैपद बहुवचन	आत्मनेपद एकवचन	आत्मनेपद बहुवचन
प्र०	आ, अ	ऊ, उं	त्थ, थ	त्थुं
म०	ओ, अ	त्थ	से	व्हं
उ०	अ, अं	म्हा	इं	म्हसे

लङ् लकार—परस्मैपद में कभी-कभी प्रथमपुरुष एकवचन

आ के स्थान में अ, बहुवचन ऊ के स्थान में उ और उं ; मध्यम-पुरुष एकवचन ओ के स्थान में अ ; तथा उत्तमपुरुष एकवचन अ के स्थान में अं भी होते हैं। ये रूप बहुत कम पाए जाते हैं।

लङ् लकार में भी धातु से पूर्व अकार आगम होता है। कभी-कभी इस अकार का लोप भी होता है।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवा, अभव	अभवू, अभवुं
म०	अभवो	अभवत्थ
उ०	अभव, अभवं	अभवम्हा

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवत्थ	अभवत्थुं
म०	अभवसे	अभवव्हं
उ०	अभविं	अभवम्हसे

भू धातु के स्थान में हू आदेश होने पर ये रूप होंगे—

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अहुवा	अहुवू अहुवु	अहुवत्थ	अहुवत्थुं
म०	अहुवो	अहुवत्थ	अहुवसे	अहुवव्हं
उ०	अहुवं	अहुवम्हा	अहुविं	अहुवम्हसे

पच धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपचा	अपचू	अपचत्थ	अपचत्थुं

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
म०	अपचो	अपचत्थ	अपचसे	अपचव्हं
उ०	अपच, अपचं	अपचम्हा	अपचिं	अपचम्हसे

गम धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छा, अगमा	अगच्छु, अगमु
म०	अगच्छो, अगमो	अगच्छत्थ, अगमत्थ
उ०	अगच्छ, अगच्छं, अगम, अगमं	अगच्छम्हा, अगमम्हा

आत्मनेपद

प्र०	अगच्छत्थ, अगमत्थ	अगच्छथुं, अगमथुं
म०	अगच्छसे, अगमसे	अगच्छव्हं, अगमव्हं
उ०	अगच्छिं, अगमिं	अगच्छम्हसे, अगमम्हसे

दिस धातु (दृश्) प्रथमपुरुष एकवचन—अद्दसा अथवा अदिस्सा ; उत्तमपुरुष एकवचन अद्दस, अद्दसं।

वच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अवचा, अवच	अवचु, अवचुं
म०	अवचो, अवच	अवचुत्थ
उ०	अवचं, अवच	अवचम्हा

ब्रू धातु—अब्रुवा, अब्रुवु इत्यादि।

कर धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अकरा, अका	अकरु
म०	अकरो	अकरोत्थ, अकत्थ
उ०	अकरं, अकं	अकरम्हा, अकम्ह

आत्मनेपद—प्रथमपुरुष एकवचन अकरत्थ, बहुवचन अकरत्थुं; मध्यमपुरुष एकवचन अकरसे, बहुवचन अकरव्हं; उत्तमपुरुष एकवचन अकरिं, बहुवचन अकरम्हसे।

दा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अददा	अददु
म०	अददो	अददित्थ
उ०	अददं	अददम्हा

इसे विकल्प से द्वित्व होता है; द्वित्व न होने के पक्ष में ये रूप होंगे—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अदा	अदुं
म०	अदो	अदित्थ
उ०	अदं	अदम्ह

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अददत्थ	अददत्थुं
म०	अददसे	अददव्हं
उ०	अददिं	अददम्हसे

अज्जतनी (अद्यतनी)

पाली में भूतकाल मात्र को द्योतित करने के लिये प्रायः लुङ् का ही प्रयोग किया जाता है। यही कारण है कि पाली भाषा में जिस प्रचुरता से लुङ् का प्रयोग पाया जाता है, उस प्रकार अन्य किसी भाषा में नहीं मिलता। संस्कृत में भूतकाल के लिये लङ्, लिट् और लुङ् तीन लकार हैं। पाली में लिट् का प्रयोग तो प्रायः नहीं के बराबर है। लङ् का प्रयोग भी विरल है। अनेक स्थलों में लङ् और

लुङ् प्रायः मिल-से गए हैं। इसलिये भूतकाल का भार सर्वथा लुङ् को ही निर्वहन करना पड़ता है। संस्कृत में लुङ् प्रकरण कठिन है। च्लि का लोप, क्स, अङ्, चङ् इत्यादि प्रभेदों से उसके अनेक प्रकार हैं। पाली में भी संस्कृत का प्रभाव पड़ा ही है। अतः इसमें भी सामान्यतः नहीं, तो विशेष स्थलों में अवश्य ही—संस्कृत के रूपों के अनुसार तारतम्य देखा जाता है।

विभक्ति

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ई, इ	उं, इंसु, इसुं	आ, इत्थ	ऊ
म०	ओ, इ	त्थ	से	व्हं
उ०	इं	म्हा, म्ह	अ, अं	म्हे

व्यंजनादि विभक्ति के परे धातु से उत्तर प्रायः इकार आगम होता है।

धातु से पूर्व विकल्प से अ का आगम होता है। परस्मैपद में कभी-कभी स्वरांत धातु से पर निम्न-लिखित विभक्ति मिला देने ही से साधारण लुङ् का पद बन जाता है—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	सि	सुं
म०	सि	सित्थ
उ०	सिं	सिम्हा, सिम्ह

व्यंजनांत धातु से उत्तर भी कभी-कभी ये सब विभक्तियाँ पाई जाती हैं।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवी, अभवि	अभवुं, अभविंसु

	एकवचन	बहुवचन
म०	अभवो, अभवि	अभवित्थ
उ०	अभविं	अभविम्हा, अभविम्ह

आत्मनेपद

प्र०	अभवा, अभवित्थ	अभवू
म०	अभविसे	अभविव्हे
उ०	अभव, अभवं	अभविम्हे

आदि में अकार का आगम विकल्प से होता है। उसके अभाव में भवी, भवि, भवुं, भविसुं इत्यादि रूप होंगे।

भू के स्थान में हू होने से इस प्रकार रूप होंगे—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अहोसि, अहू	अहेसुं, अहवुं
म०	अहोसि	अहोसित्थ
उ०	अहोसिं, अहुं	अहोसिम्ह, अहुम्ह

पच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपची, अपचि	अपचुं, अपचिंसु
म०	अपचो, अपचि	अपचित्थ
उ०	अपचिं	अपचिम्हा, अपचिम्ह

गम धातु

	एकवचन	बहुवचन
	(क)	
प्र०	अगच्छि	अगच्छुं, अगच्छिंसु
म०	अगच्छो, अगच्छि	अगच्छित्थ
उ०	अगच्छिं	अगच्छिम्हा, अगच्छिम्ह

(ख)

प्र०	अगमी, अगमि, अगमासि	अगमुं, अगमिंसु, अगमिसु
म०	अगमो, अगमि	अगमित्थ, अगमुत्थ
उ०	अगमिं	अगमिम्हा, अगमिम्ह, अगमुम्ह

(ग)

प्र०	अगञ्छि	अगञ्छुं, अगञ्छिंसु
म०	अगञ्छो, अगञ्छि	अगञ्छित्थ
उ०	अगञ्छिं	अगञ्छिम्हा, अगञ्छिम्ह

(घ)

लुङ् लकार में गम धातु के स्थान में विकल्प से गा आदेश होता है, उस दशा में इसके रूप इस प्रकार होते हैं—

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगा	अगुं
म०	अगा	अगुत्थ
उ०	अगं	अगुम्हे

लभ धातु—इसके प्रथम और उत्तम पुरुष के एकवचनों के प्रत्ययों के स्थान में विकल्प से क्रमशः त्थ और त्थं होता है। यथा—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अलत्थ, अलभि	अलभिंसु, अलभिसुं
म०	अलभि	अलभित्थ
उ०	अलत्थं, अलभिं	अलभिम्हा

दिस (दृश्)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपस्सी, अपस्सि	अपस्सिंसु

	एकवचन	बहुवचन
म०	अपस्सि	अपस्सित्थ
उ०	अपस्सिं	अपस्सिम्ह

पस्स आदेश न होने पर ये रूप होंगे—

प्र०	अद्दक्खि	अद्दक्खिसु, अद्दक्खुं
म०	अद्दक्खासि	अद्दक्खासुं
उ०	अद्दसासि	अद्दसंसु, अद्दसुं

सक (शक्) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	असक्खि	असक्खिंसु
म०	असक्खि	असक्खित्थ
उ०	असक्खिं	असक्खिम्ह

कुस (कुश) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अक्कोसि, अक्कोच्छि	अक्कोसिंसु, अक्कोच्छिंसु
म०	अक्कोसि, अक्कोच्छि	अक्कोसित्थ, अक्कोच्छित्थ
उ०	अक्कोसिं	अक्कोसिम्ह

गह (ग्रह) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगण्हि, अग्गहि, अग्गहेसि	अगण्हिसु, अग्गहिंसु, अग्गहेसुं
म०	अगण्हि, अग्गहि, अग्गहेसि	अगण्हित्थ, अग्गहित्थ, अग्गहेत्थ
उ०	अगण्हिं, अग्गहिं, अग्गहेसिं	अगण्हिम्ह, अग्गहिम्ह, अग्गहेम्ह

रुध धातु—अरुन्धि, अरुन्धिसु इत्यादि ।

छिद—अच्छिन्दि, अच्छिन्दिंसु ।

तथा अच्छिज्जि, अच्छिज्जिसु ।

नि + सद धातु—निसीदि निसीदिंसु, निसीदिसुं ।
भास (भाष)—अभासि अभासिसुं ।

अस धातु (अदादिगणी)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	आसि	आसुं, आसिंसु
म०	आसि	आसित्थ
उ०	आसिं	आसिम्ह

वच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अवोच	अवोचुं, अवोचु
म०	अवोचो	अवोचुत्थ
उ०	अवोचिं	अवोचुम्हा

ब्रू धातु—अब्रुवी, अब्रुवि अब्रुवुं इत्यादि ।
हन—अवधि, अहनि अवधिसु, अहनिसु ।
हा—अजहासि, अजहि अजहुं, अजहिसु ।
दा—अददि, अदज्जि, अदासि अददुं, अददिंसु, अदज्जिसु, अदंसु ।
ध—अधासि अधंसु इत्यादि ।
पि + धा—पिदहि पिदहिसु इत्यादि ।
ठा धातु—अट्ठासि अट्ठंसु इत्यादि ।
सं + ठा —सण्ठहि, सण्ठहिंसु इत्यादि ।
पा—अपिबि, अपासि अपिबिसु, अपंसु ।
ञा (ज्ञा)—अजानि, अञ्ञासि अजानिंसु, अञ्ञासुं ।
जि—अजिनि, अजेसि अजिनिंसु, अजेसुं ।
हि—अहिणि अहिणिसु ।
प + हि—पाहेसि पाहेसुं ।

प + आप (प्राप्)—पापुणि	पापुणिंसु ।
नी—अनयि	अनयिंसु ।
हु—अजुन्हि, अजुहोसि	अजुन्हिंसु, अजुहोसुं ।

कर (कृ) धातु

	एकवचन	बहुवचन
	(क)	
प्र०	अकरि	अकरिंसु, अकंसु, अकरुं
म०	अकरि	अकरित्थ
उ०	अकरिं	अकरिम्ह
	(ख)	
प्र०	अकासि	अकासुं
म०	अका	अकासित्थ
उ०	अकासिं	अकासिम्ह
	आत्मनेपद	
प्र०	अकासित्थ	अकासू
म०	अकासिसे	अकासिव्हे
उ०	अकासुं	अकासिम्हे

चुरादिगणी धातुओं के तथा णिजंत धातुओं के लुङ् के रूप करने में अय् के स्थान में ए हो जायगा और फिर लुङ् के प्रत्यय होंगे। यथा—

चुर धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अचोरेसि	अचोरेसुं
म०	अचोरेसि	अचोरेसित्थ
उ०	अचोरेसिं	अचोरेसिम्ह

मन्त धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अमन्तेसि	अमन्तेसुं
म०	अमन्तेसि	अमन्तेसित्थ
उ०	अमन्तेसिं	अमन्तेसिम्ह

उप + नम (णिजन्त)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	उपनामेसि	उपनामेसुं
म०	उपनामेसि	उपनामेसित्थ
उ०	उपनामेसिं	उपनामेसिम्ह

भू (णिजन्त)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भावेसि	भावेसुं
म०	भावेसि	भावेसित्थ
उ०	भावेसिं	भावेसिम्ह

णिजन्त

संस्कृत में प्रेरणार्थक धातुओं से णिच् प्रत्यय होता है । पाली में भी अय और आपय प्रत्यय होते हैं। इन प्रत्ययों के बाद धातु में यथासंभव गुण और वृद्धि होते हैं। संस्कृत के णिच् के स्थान में भी अय् होता है, उसके अनुसार पाली में अय् होता है। संस्कृत में कुछ णिजन्त धातुओं को (ऋ ही आकारांत आदि) पुक् आगम होता है, और तदनुसार अर्पयति, ह्रेपयति, दापयति आदि रूप होते हैं । पाली में उसी के अनुकरण में प्रायः सर्वत्र ही वैकल्पिक आपय प्रत्यय होता है ।

कर धातु

	एकवचन	बहुवचन
	(क)	
प्र०	कारयति	कारयन्ति
म०	कारयसि	कारयथ
उ०	कारयामि	कारयाम
	(ख)	
प्र०	कारापयति	कारापयन्ति
म०	कारापयसि	कारापयथ
उ०	कारापयामि	कारापयाम

जैसा कि पूर्व में कहा गया है, पदांतर्गत अय के स्थान में कभी-कभी ए हो जाता है, तदनुसार णिजन्त में जब अय के स्थान में ए और आपय के स्थान में आपे हो जायँगे, तो दो प्रकार के रूप और होंगे। यथा—

	एकवचन	बहुवचन
	(ग)	
प्र०	कारेति	कारेन्ति
म०	कारेसि	कारेथ
उ०	कारेमि	कारेम
	(घ)	
प्र०	कारापेति	कारापेन्ति
म०	कारापेसि	कारापेथ
उ०	कारापेमि	कारापेम

अन्यान्य लकार भी इसी प्रकार होंगे।

पच धातु—पाचयति, पाचेति, पाचापयति, पाचापेति।

गुह—गूहयति, गूहेति।

दुस—दूसयति, दूसेति ।

गम—गमयति, गामयति, गामेति, गच्छापयति, गच्छापेति ।

सम—समयति, समेति ।

जन—जनयति, जनेति ।

नियम—नियामयति, नियामेति ।

घट—घटयति, घटेति, घटापयति, घटापेति ।

बुध—बोधयति, बोधेति, बुज्झापयति, बुज्झापेति ।

गह (ग्रह)—ग्राहयति, ग्राहेति, गाहापयति, गाहापेति, गण्हापयति, गण्हापेति ।

हा—जहापयति, जहापेति, हापयति, हापेति ।

दा—दापयति, दापेति ।

अपि + धा—पिधापयति, पिधापेति, पिदहापयति, पिदहापेति ।

हु—जुहापयति, जुहापेति, जुहावेति ।

सु (श्रु)—सावयति, सावेति ।

जि—जयापयति, जयापेति ।

चुर—चोरापयति, चोरापेति ।

चिन्त—चिन्तापयति, चिन्तापेति ।

सनंत

किसी क्रिया की इच्छा होने पर—इच्छार्थक सन् प्रत्यय धातु के बाद होता है। जुहोत्यादि गण के समान सन् के परे द्वित्वादिकार्य होते हैं। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि कर्ता क्रिया की इच्छा अपने लिये करेगा तभी सन् होगा। अन्य के लिये क्रिया की इच्छा करने से सन् न होगा। जैसे गोविंदो पिपासति—अर्थात् गोविंद पीने की इच्छा स्वयं करता है और यदि अन्य कोई पिए इस बात की इच्छा गोविंद करे, तो 'पिपासति' यह प्रयोग न होगा। सन् के परे द्वित्व होने पर पूर्वनिर्दिष्ट ह्रस्व, दीर्घ, संधि-कार्य आदि यथासंभव होंगे। पाली-

सनंत के रूप किस प्रकार संस्कृत-सनंत का अनुकरण करते हैं,
का पता निम्न-लिखित तुलना से ज्ञात होगा। यथार्थ में पाल
स्वतंत्र रूप से सनंत की उत्पत्ति प्रतीत नहीं होती, प्रत्युत संस
सनंत रूप से ही, आवश्यक परिवर्तन के अनंतर, पाली सनंत है
होता है। यह बात नहीं है कि पाली में सनंत का प्रयोग अ
विरल है; परंतु जितनी स्वतंत्रता से अन्य रूप पाली में है, उ
स्वतंत्रता इसमें नहीं है, और फलतः पाली के सनंत को संस्कृ
सनंत का पूर्ण रूप से मुखापेक्षी होना पड़ता है। जिन धातुओं
(तितिक्षति प्रभृति) संस्कृत में स्वार्थ में सन् होता है, उन्हीं धातु
से पाली में भी स्वार्थ में सन् होता है।

	संस्कृत-सनंत	पाली
भुज् धातु	बुभुक्षति	बुभुक्खति
घस् (अद्)	जिघत्सति	जिघच्छति
श्रु	शुश्रूषति (ते)	सुस्सूसति
पा	पिपासति	पिवासति
जि	जिगीषति	जिगिंसति
हृ	जिहीर्षति	जिगिंसति

जि और हृ (हर), दोनों के स्थान में पाली में गि आ
होता है। स्वार्थ में सन् नीचे लिखी धातुओं से होता है—

तिज्	तितिक्षति (ते)	तितिक्खति
गुप्	जुगुप्सति (ते)	जिगुच्छति
कित्	चिकित्सति	चिकिच्छति, तिकि
मान्	मीमांसते	वीमंसते

सनंत धातु से णिच् होने पर भी पूर्ववत् अय् और
होंगे। यथा—

तिज्—तितिक्खयति, तितिक्खापयति

कित्—तिकिच्छयति, तिकिच्छेति, तिकिच्छापयति, तिकिच्छापेति
भुज्—बुभुक्खयति, बुभुक्खापयति

यङन्त और यङ्लुगंत

क्रिया का बार-बार होना अथवा अतिशय होना, इसे द्योतित करने के लिये संस्कृत में यङ् तथा यङ्लुक होते हैं। श्रीयुत विधुशेखर भट्टाचार्य लिखते हैं कि 'पाली-व्याकरण में इस संबंध में विशेष सूत्र न देखे जाने पर भी तत्सदृश कुछ प्रयोग देखे जाते हैं।' यथार्थ में जहाँ विशेष सूत्र उपलब्ध होते भी हैं, वहाँ भी प्रायः संस्कृत के रूपों में ही परिवर्तन होकर पाली-रूप दिखाई देता है। मूल धातु से पाली में इन रूपों का सिद्ध करना अकांडतांडव होगा।

कुछ उदाहरण उद्धृत किए जाते हैं—

ज्वल धातु पाली में दल हो जाती है। अतः पाली में दादल्लति रूप होता है—संस्कृत में—जाज्वल्यति (ते)।

क्रम (कम—पाली)—सं०—चङ्क्रमीति,
पाली—चङ्कमति

गम— सं०—जङ्गमीति
पाली—जङ्गमति

चल— सं०—चञ्चलीति
पाली—चञ्चलति

लप— सं०—लालप्यति (ते), लालपीति,
पाली—लालप्यति, लालपति

नाम धातु

नाम (संज्ञा) से तद्वत् आचरण करने में जो क्रियाएँ बनती हैं, वे नाम धातु कहलाती हैं। इस प्रकरण के नियम पाली में प्रायः संस्कृत के समान होते हैं—

पब्बत (पर्वत) के समान हो जाना = पब्बतायति
समुद्द ,, ,, ,, = समुद्दायति
धूम ,, ,, ,, = धूमायति

ये उदाहरण हुए जब उपमान कर्ता था—समुद्र इव आचरति इत्यादि।

परंतु जब उपमान कर्म होगा, अर्थात् पुत्रमिव आचरति शिष्यः = पुत्रीयति; पुत्त = पुत्तीयति; छत्त = छत्तीयति।

अपनी निजी इच्छा किसी वस्तु के प्राप्त करने के लिये होने पर इच्छार्थक धातु के कर्मभूत शब्द से उत्तर ईय होता है।

अत्तनो पत्तं (पात्रं) इच्छति = पत्तीयति।
अत्तनो वत्थं (वस्त्रं) इच्छति = वत्थीयति।
चीवर = चीवरीयति।
पट = पटीयति।
पुत्त = पुत्तीयति इत्यादि।

दळ्हं करोति = दळ्हयति, पमाणं करोति = पमाणयति आदि प्रयोग संस्कृत के समान होते हैं।

कर्म और भाववाच्य

संस्कृत के समान पाली में भी क्रियाओं में कर्मवाच्य, भाववाच्य और कर्मकर्तृवाच्य प्रत्यय होते हैं। कर्म की प्रधानता रहने से—अभिहित होने पर—जब वह प्रथमा में होता है, तब क्रिया में कर्मवाच्य प्रत्यय होते हैं—जैसे देवदत्त अन्न पकाता है; जब अन्न अभिहित होकर प्रथमा में होगा तब यह रूप होगा—अन्न देवदत्त से पकाया जाता है। यह कर्मवाच्य सकर्मक धातुओं में होता है। अकर्मक धातुओं में जब केवल भाव अर्थात् क्रिया-मात्र द्योतित करना अभीष्ट होता है, उस समय कर्ता अप्रधान हो जाता है—जैसे मैं सोता हूँ, मुझसे सोया जाता है। कभी-कभी कर्म ही कर्ता के रूप में आकर क्रिया करता है। इस प्रकार

के प्रयोग को कर्मकर्तृ प्रयोग कहते हैं—जैसे चावल पकता है, रास्ता चलता है आदि। संस्कृत के अनुसार पाली में भी इन तीनों प्रकारों में यकार होता है और फिर साधारण कल्प के नियमों के अनुसार यथासंभव संधिकार्य आदि होते हैं। पाली में, संस्कृत से भिन्न—कर्म और भाववाच्य परस्मैपद और आत्मनेपद, दोनों पदों में प्रयुक्त होते हैं।

यथा—पच्यते—पच्चते, पच्चति।

बुध्यते—बुज्झते, बुज्झति।

उच्यते—उच्चते, उच्चति।

वुच्चते, वुच्चति।

य प्रत्यय होने पर सभी धातुओं से परे विभक्ति और यकार से पूर्व इकार आगम होता है। यथा—

तुस धातु (तुष्)—तुस्सते, तुसियति।

पुच्छ (पृच्छ)—पुच्छते, पुच्छियति।

दंस (दंश)—दस्सते, दसियति।

भञ्ज—भञ्जते, भञ्जियति।

सुप (स्वप)—सुप्पते, सुपियते।

नन्द—नन्दियते।

मह—महीयति।

मथ—मथीयति।

निम्न-लिखित रूप भी ध्यान देने योग्य हैं—

इ धातु—ईयते; हू—हूयते; सु—सूयते।

भू—भूयते; लू—लूयते; पू—पूयते।

जन—जायते, जञ्ञते; तन—तायते, तञ्ञते।

वह—उय्हते, वुल्हति; यज—इज्जते; वच—उच्चते, वुच्चते।

इस (इष)—इस्सते, इस्सति, एसीयति, इच्छीयति।

दिस (दृश)—दिस्सति, पस्सीयति, दक्खीयति ।

यम—यमीयति, यच्छीयति ।

गम—गच्छीयति, गच्छीयते ।

वद—वज्जीयति, वदीयति ।

नि + सद—निसज्जते ।

दा—दीयते; पा—पीयते; ठा—ठीयते,

मा—मायते; हा—हीयते; धा—धीयते ।

कर—करीयति, करिय्यति, करिय्यते, कयिरति, कय्यति ।

जर—जीरीयति, जीय्यति ।

चुर—चोरियति ।

चिन्त—चिन्तयति ।

भू—णिच्-कर्मवाच्य—भावीयति ।

अन्यान्य लकार यथानियम विभक्ति (प्रत्यय) आदि के योग से होंगे। उदाहरणार्थ पच धातु के रूप भिन्न-भिन्न लकारों में दिए जाते हैं।

पच धातु

प्रथमपुरुष

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लट्	पच्चति	पच्चन्ति	पच्चते	पच्चन्ते
विधिलिङ्	पच्चे, पच्चेय्य	पच्चेय्युं	पच्चेथ	पच्चेरं
लोट्	पच्चतु	पच्चन्तु	पच्चतं	पच्चन्तं
लङ्	अपच्चा	अपच्चु	अपच्चत्थ,	अपच्चथ, अपच्चत्थुं
लिट्	पपच्च	पपच्चु	पपच्चित्थ	पपच्चिरे
लृट्	पच्चिस्सति	पच्चिस्सन्ति.	पच्चिस्सते	पच्चिस्सन्ते

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लृङ्	अपच्चिस्सा	अपच्चिस्संसु.	अपच्चिस्सथ	अपच्चिस्सिंसु
	अपच्चिस्स	अपच्चिसु		
लुङ्	अपच्चि	अपच्चिसु	अपच्चित्थ	अपच्चू
	पच्चि	पच्चिसु	पच्चित्थ	पच्चू

भू धातु—णिजंत-कर्मवाच्य

प्रथमपुरुष

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लट्	भावीयति	भावीयन्ति	भावीयते	भावीयन्ते
विधि०	भावीयेय्य	भावीयेय्युं	भावीयेथ	भावीयेरं
लोट्	भावीयतु	भावीयन्तु	भावीयतं	भावीयन्तं
लङ्	अभावीया	अभावीयु	अभावीयत्थ	अभावीयत्थुं
लृट्	भावीयिस्सति	भावीयिस्सन्ति	भावीयिस्सते	भावीयिस्सन्ते
लृङ्	अभावीयिस्सा	अभावीयिस्संसु	अभावीयिस्सथ	अभावीयिस्सिंसु
लुङ्	अभावीयि	अभावीयिंसु	अभावीयित्थ	अभावीयू

अव्यय

संस्कृत के समान पाली में भी उपसर्गों की बहुलता है। धातु के संयोग से उनमें क्या परिवर्तन होता है, यह पूर्व में लिखा जा चुका है। यहाँ केवल उनका परिगणन-मात्र किया जाता है।

प्र	प	पबलो (प्रबलः)	अप्पदुट्ठो (अप्रदुष्टः)
परा		पराजितो,	परक्कमो
अप		अपमानो,	अपेतो
सम्		समासो,	सन्धि
अनु		अनुमतो,	अनुपघातो, अनुस्सरति

अव		अवत्था ओतरणं, ओवारो
निस्, निर्	नी	निग्गतो, निब्भरो, नीहरणं, नीहारो
दुस्, दुर्		दुग्गमं, दूहारः
वि		विवट्टो, विचित्तं, वीतिहारो, वीतिक्कमो
आङ्		आवासो अक्कोसो (आक्रोश:) अञ्जातो (आज्ञातः)
नि		
अधि		अधिसीनो, अज्झायो (अध्याय:)
अपि		अपिधानं
अति		अतीतो, अच्चन्तं (अत्यन्तं)
सु		सुग्गहीतो,
उत्		उग्गच्छति, उप्पन्नो
अभि		अब्भागमनं (अभ्यागमनं), अब्भन्तरं
प्रति	पति	पटिबद्धो, पतिरूपं, पच्चेकं, पटिभानं
परि		परिवुतो, परियादानं (पर्यादानं), पयिरुपासति (पर्युपासति)
उप		उपसग्गो, उपेक्खा

सर्वनाम घटित अव्यय—

किं	कुहिं, कुहिञ्चनं, कुहं, कह, क, कुत्र, कुत्थ, कत्थ, किस्मिचि
तत्	तहिं, तहं, तत्र, तत्थ
यत्	यहिं, यत्र, यत्थ
इदम्	इह, इध
एतद्	अत्र, अत्थ, एत्थ

सर्व	सब्बत्र, सब्बत्थ, सब्बधि
पर	परत्र, परत्थ
अन्य	अञ्जत्र, अञ्जत्थ
इतर	इतरत्र, इतरत्थ
अदस्	अमुत्र, अमुत्थ

संस्कृत में जिस प्रकार पंचमी, सप्तमी, तृतीया प्रभृति से तस् होता है (और वह सार्वविभक्तिक तसिल् कहलाता है), उसी प्रकार पाली में भी होता है।

कुतो, ततो, यतो, इतो, एत, अतो, सब्बतो, पुरिसतो इत्थितो, भिक्खुनितो—इत्यादि।

कालवाचक अव्यय—

किं—कदा, कुदाचनं

तत् (त)—तदा, तदानि, तरहि

यत् (य)—यदा

सर्व (सब्ब)—सब्बदा

इदम् (इम)—अधुना, इदानि, एतरहि

अन्य (अञ्ज)— अञ्जदा

एक—एकदा

प्रकारवाचक—

तथा—तथत्त; यथा—यथत्त; इत्थ—सब्बथा, सब्बत्थत्ता, अञ्जथा।

विभक्ति के अर्थ को प्रकाशित करनेवाले अव्यय—

प्रथमार्थ—अत्थि, सक्का (शक्यं), लब्भा (लभ्यं)। संबोधनार्थ—श्रमणगण को संबोधित करने में आवुसो शब्द का प्रयोग होता है; तथा भंते श्रेष्ठों के लिये आता है; हीन व्यक्ति के संबोधन में रे, अरे, हरे आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। दासी प्रभृति के संबोधन में जे शब्द का प्रयोग होता है।

तृतीयार्थ—सयं (स्वयं), सामं (स्वयं), सं (स्वं), सम्मं, सम्मा (सम्यक्) ।

सप्तम्यर्थे—समन्ता, सामन्ता, समन्तो (समन्तात्), परितो, अभितो, एकज्झं (एकत्र), एकमन्तं (एकान्ते), हेट्ठा (अधस्तात्), उपरि, तिरियं (तिर्यक्), सम्मुखा, परम्मुखा (पराङ्मुखं), आवि (आविः = प्रकाशः), रहो, तिरो, अन्तो, अज्झत्तं (अध्यात्मं), बहिद्धा (बहिर्धा), बाहिरा, बाहिरं (बहिः, बाह्य), ओरं (अवरं, अस्मिन् पक्षे), पारं (परस्मिन् पक्षे), आरा, आरका (आरात् दूरे), पच्छा (पश्चात्), हुरं (परत्र), पुरे (पुरः), पेच्च (प्रेत्य) ।

कालवाची—सम्पति (संप्रति), आयति (भविष्यतकाले), अज्ज (अद्य), अपरज्जु (अपरेद्युः), परज्जु (परेद्युः), सुवे, स्वे (श्वः), उत्तरसुवे (उत्तरश्वः), हिय्यो (ह्यः), परे, सज्जु (सद्यः), सायं, पातो (प्रातः), कालं, कल्लं (कल्यं), दिवा, रत्तं, निच्चं (नित्यं), सततं, अभिण्हं, अभिक्खणं (अभीक्ष्णं), मुहुं (मुहुः), मुहुत्तं (मुहूर्तः), भूतपुब्बं (भूतपूर्वं), पुरा इत्यादि ।

अन्यान्य अव्ययगण—

अङ्ग—	संबोधन
अञ्ञदत्थु—	अन्यदस्तु
अत्थं—	अस्त (अदर्शन)
अत्थि—	अस्ति
अत्थु—	अस्तु
अद्धा—	एकांश, एकान्त
अप्पेव—	अप्येवं (संशय-द्योतक)
अप्पेव नाम—	अप्येवं नाम (संशय-सूचक)

असकं—	असकृत
अस्सु—	पद-पूरक
आम—	(आम्, हां, स्वीकृति-बोधक)
इङ्ग—	प्रेरणा-प्रवर्तना
ईसं—	ईषत्, अल्प, मन्द
ईसकं—	,, ,, ,,
उद—	उत (विकल्प-द्योतक)
उदाहु—	उताहो ,,
एत्तावता—	एतावता
एनं—	एतत्
ओपायिकं—	सम्मति-सूचक
कच्चि—	कच्चित् (स्वाभिप्राय-प्रकाशक)
कि नं—	किं तत्
किंसु—	किंस्वित् (प्रश्नद्योतक)
किञ्चि—	किञ्चित्
कित्तावता—	कियता, कितना
किर—	किल
कीव—	कियत्
चरहि—	तर्हि (पद-पूरणार्थक)
खो—	खलु
चे—	चेत्
तं—	तत्
तग्घ—	एकांश, एकान्त, (निश्चय)
तथरिव—	तथेव
तावता—	तावता, उतना
दुट्ठु—	दुष्ठ, खराब

सुट्ठु—	सुष्ठु, सुन्दर
नं—	(पुनं) तत्
पगे—	प्रगे, प्रातः
पतिरूपं—	प्रतिरूपं, उचित, योग्य
पन—	पुनः
परसवे—	परश्वः, परसों
पसय्ह	प्रसह्य (बलपूर्वक)
पुथु—	पृथक्
पुनप्पुनं —	पुनः-पुनः, बार-बार
पुरत्था—	पुरस्तात्, आगे
बलवं—	बलवत्
मनं—	मनाक्, थोड़ा
मुसा—	मृषा, झूठ
यं०—	यत्
यग्घे—	पद-पूरणार्थक
यथरिव—	यथेव
यावता—	यावता, जितना (परिमाण)
लहुं अथवा लहु—	लघु, शीघ्र, सम्मति (निश्चय)
वथ और वत—	वत पदपूरणार्थक
विय—	इव (उपमासूचक)
विसुं—	अलग होना
वे—	वै (निश्चयात्मक
सचे—	चेत्, तच्चेत्
सच्छि—	साक्षी, शाक्षात्, प्रत्यक्ष
सद्धं—	श्रद्धं, श्रद्धायुक्त
सद्धिं	सार्द्धं, साथ

सनिकं—	शनकैः, शनैः, धीरे से
सम्मा—	सम्यक्, सुंदर
ससक्कं—	एकांश, निश्चय
सहसा, साहसा—	हठात्, अचानक
सामि—	सामि, अर्ध, आधा
साहु—	साधु
सुदं—	पदपूरक
सुवत्थि—	स्वस्ति (मंगल-सूचक,)
सुवे—	श्वः
सेय्यथापि—	तद्यथापि
सेय्यथीदं—	तद्यथेदं
ह—	ह, पदपूरक
हवे—	हवै, (निश्चयात्मक)

कृदंत

संस्कृत में वर्तमानकाल द्योतित करने के लिये परस्मैपदी धातुओं से शतृ प्रत्यय तथा आत्मनेपदी से शानच् होता है। पाली में शतृ के स्थान में अन्त तथा शानच् के स्थान में आन अथवा मान होता है। भविष्यत्काल में संस्कृत में स्यतृ होता है। उसके स्थान में पाली में स्सं वा स्सन्तु होता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि जिस प्रकार संस्कृत में परस्मैपदी से शतृ और आत्मनेपदी से शानच् होता है, वैसा नियम नहीं है। बिना किसी विशेषता के दोनों पदों से ही ये सब प्रत्यय देखे जाते हैं।

अन्त तथा स्सं और स्सन्तु प्रत्यय जिनके अंत में होते हैं, उन शब्दों के रूप गच्छन्त शब्द के समान होते हैं, और आन और मान प्रत्ययान्त शब्दों के रूप बुद्ध शब्द के समान होंगे।

गम धातु—गम + अन्त = गच्छ, गच्छन्तो; गम + मान = गच्छमानो ; गम + स्सन्तु = गमिस्सं।

कर धातु—कुब्बन्तो, करोन्तो, कुरुमानो, करानो, करिस्सं

भुञ्ज— भुञ्जन्तो, भुञ्जमानो, भुञ्जानो, भुञ्जिस्सं

खाद— खादन्तो, खादमानो, खादानो, खादिस्सं

चर— चरन्तो, चरमानो, चरानो, चरिस्सं

अस धातु—मान = समानो,

सुस (शुष्)—मान = सुक्खमानो

अन्त, अन्तु और स्सन्तु प्रत्ययांत से स्त्रीलिंग में ई प्रत्यय होता है और तब अन्त आदि के नकार का विकल्प से लोप होता है। यथा—गच्छती, गच्छन्ती; करिस्सती, करिस्सन्ती। इन शब्दों के रूप इत्थी शब्द के समान होंगे।

आन और मान प्रत्ययांत शब्द के स्त्री लिंग में आ प्रत्यय होता है और कञ्ञा शब्द के समान रूप होते हैं।

नपुंसकलिंग में चित्त शब्द के समान रूप होते हैं।

तावी प्रत्यय

कर्तृवाच्य में भूतकाल द्योतित होने पर, सब धातुओं से तावी प्रत्यय होता है, और उसके परे निष्ठा प्रत्यय के समान कार्य होते हैं। जैसे—भुक्तवान् इस अर्थ में भुज धातु से भुत्तावी होता है। हु धातु से हुतावी तथा वस धातु से वुसितावी। तावी और वक्ष्यमाण आवी प्रत्यय जिनके अंत में रहते हैं, उन पदों के रूप दण्डी शब्द के समान होते हैं।

आवी प्रत्यय

किसी क्रिया के करने का किसी मनुष्य का स्वभाव (शील) हो अथवा उस क्रिया को वह सरलतया अच्छे प्रकार से कर सकता हो (साधुकारी) इन दोनों अर्थों में (तच्छील और तत्साधुकारी

अर्थों में) पाली में धातु के अनंतर आवी प्रत्यय होता है । यथा—भयं पस्सितुं सीलं यस्स (भयं द्रष्टुं शीलं यस्य)—अर्थात् स्वभावतः ही जो मनुष्य भय देखता है अर्थात् सर्वत्र निष्कारण भी भय देखने का जिसका स्वभाव है, उसके लिये भयदस्सावी पद का प्रयोग होगा । इसी प्रकार भय दिखाने में जो साधुकारी होगा, कुशल होगा वह भी भयदस्सावी कहलाएगा ।

तावी और आवी प्रत्ययांत शब्दों के स्त्रीलिंग में इनी प्रत्यय होता है । यथा—हुतावी—हुताविनी, भुत्तावी—भुत्ताविनी; वुसितावी—वुसिताविनी; भयदस्सावी—भयदस्साविनी ।

ऊ प्रत्यय

कर्तृवाच्य में शील आदि उपर्युक्त अर्थ में—पार प्रभृति उपपद-पूर्वक गम धातु, उपपद-पूर्वक ज्ञानार्थक विद धातु, तथा उपसर्ग अथवा अन्य कोई उपपद—सहित जा (ज्ञा) धातु के बाद ऊ प्रत्यय होता है । यथा—पारगू (संस्कृत पारगः), लोकविदू (लोकवित्), विञ्ञू (विज्ञः), सब्बञ्ञ (सब्बञ्ञू:) इत्यादि ।

त, तवन्तु (निष्ठा)

संस्कृत के क्त और क्तवतु के स्थान में यथाक्रम त और तवन्तु प्रत्यय पाली में होते हैं । इन प्रत्ययों के होने पर धातु-समूहों में यथा-संभव संस्कृत के समान कार्य होते हैं ।

त प्रत्ययांत शब्द के रूप अकारांत शब्द के समान तथा तवन्तु प्रत्ययांत के गुणवन्तु के समान होंगे ।

हु + त = हुतो; हु + तवन्तु—हुतवा । वच + त = उत्तो; वच + तवन्तु = उत्तवा । वस + त = उत्थो, वुत्थो, उसितो, वुसितो, वसितो । यज + त = यिट्ठो ।

भञ्ज + त = भग्गो; नत (नृत्) + त—नच्चं; सुस (शुष्) + त—सुक्खं, बुध (वृध्) + त = वुड्ढो; अपि + नह + त = पिलद्धं;

रुद + त—रोदितं, रोणं, रुएणं; परि + कत (कृत्—कर्तने) + त = परिकत्तं; दा + त = दत्तं, दिन्नं; धा + त = हितं, धातं; मुह + त = मुल्हो; गुह + त = गुल्हो; वह + त = उल्हो

आस + त = आसीनो; चर + त = चरिओ, चिएणो।

कृत्य प्रत्यांत

संस्कृत के कृत्य प्रत्यांत पद साधारण परिवर्त्तन के साथ पाली में भी व्यवहृत होते हैं। पाली क्रियाओं से प्रत्यय करने की अपेक्षा संस्कृत कृत्य प्रत्यांत से पाली में परिवर्तन करना विशेष सुकर और युक्ति-संगत होगा। *

भू—सं० भवितव्य पा० भवितब्बं—तव्यत्

,, भवनीय ,, भवनीय—अनीयर्

और भी उदाहरण निम्न-लिखित हैं—

उप्पज्जितब्बं, उप्पज्जनीयं

सयितब्बं, सयनीयं

बुज्झितब्बं, बुज्झनीयं

सुणितब्बं, सवणीयं

गरिहतब्बं गरहनीयं

पत्तब्बं, पापुनणीयं, पापणीयं

ण्यत्	हृ धातु—	सं०	हार्यं	पाली—	हारियं
	कृ—	,,	कार्यं	,,	कारियं
	लभ्—	,,	लभ्यं	,,	लब्भं
	शास (सास्)—		शास्यं	,,	सिस्सो

---

* परंतु कहीं-कहीं पाली की विशेषता भी दृष्टिगोचर होती है। संस्कृत में जहाँ श्रोतव्यम् होता है, पाली में विकरण-सहित सुणातब्बं प्रयोग होता है।

भू— भाव्यं भव्वं

दा— देय्यं, मा—मेय्यं

कृ— (कृत्यं) कच्चं

भृ— (भृत्यः) भच्चो

तव्यत् के स्थान में पाली में एक और प्रत्यय तय्य भी पाया जाता है—ञातय्यं, दट्ठय्यं, पत्तय्यं इत्यादि ।

त्वा, त्वान, तून, (क्त्वा)

पूर्वकालिक क्रिया में संस्कृत में क्त्वा (नञ्वर्जित उपपद रहने पर ल्यप्) होता है । पाली में उसके स्थान में त्वा, त्वान और तून होते हैं । इनमें से तून का प्रयोग विरल है । तून का प्रयोग प्राकृत में अधिकतर पाया जाता है ।

कर (कृ)—कत्वा, करित्वा, कत्वान, कत्तून

गम—गन्त्वा, गन्त्वान, गन्तून

हन—हन्त्वा, हन्त्वान, हन्तून

सु (श्रु)—सुत्वा, सुणित्वा

जि—जित्वा, जेत्वा, जिनित्वा

प—आप (सं० प्राप) पत्वा, पापुणित्वा

दिस (दृश्)—पस्सित्वा ।

हा—जहित्वा, जहत्वा, जहित्वान

छिद—छित्वा, छेत्वा, छिन्दित्वा

भिद—भिज्जित्वा

दा—दत्वा, ददित्वा

य (ल्यप्)

संस्कृत के ल्यप् के बदले पाली में य होता है, परंतु संस्कृत में जिस प्रकार धातु से पूर्व उपसर्गादि की स्थिति आवश्यक है, वैसी पाली में नहीं है । पाली में जहाँ त्वा होता है उसी स्थान में वैकल्पिक रूप से

य होता है, चाहे उपसर्ग हो या न हो। संस्कृत में उपसर्ग-पूर्वक धातु से अवश्य ही ल्यप् होता है, किंतु पाली में उस स्थल में भी त्वा देखा जाता है। इस तरह यह स्पष्ट है कि त्वा और य के लिये पाली में नियम नहीं है, रामायण महाभारतादि की संस्कृत में भी ल्यप् का अनियमित प्रयोग पाया जाता है और उपसर्ग-पूर्वक से ही ल्यप् हो यह आवश्यक नहीं है। गृह्य आदि प्रयोग बहुत मिलते हैं और आर्ष-प्रयोग कहकर इनका समाधान किया जाता है।

वन्द—वन्दिय; अभिपूर्वक—अभिवन्दिय, अभिवन्दित्वा; उप + नी + य—उपनीय, उपनेत्वा; नि + सि (श्रि) + य = निस्साय (निःश्रित्य); निस्सित्वा।

आकारान्त धातु से परवर्ती यकार का कभी-कभी लोप होता है—अभिञ्ञा (अभिञ्ञाय—अभिज्ञाय); अनुपा + दा + य = अनुपादा (अनुपादाय); पटिसंखा (प्रतिसंख्याय)।

तुं तवे इत्यादि

संस्कृत के तुमुन् के स्थान में पाली में तुं और तवे प्रत्यय होते हैं। 'तवे' यह प्रयोग वैदिक संस्कृत से लिया गया है; परंतु पाली में आते-आते इसका प्रयोग विरल हो गया है।

कर + तुं = कत्तुं, कातुं।
मन + तुं = मन्तुं, मनितुं।
हन + तुं = हन्तुं, हनितुं।
सु (श्रु)—तुं—सोतुं, सुणितुं।
जि—जेतुं, जिनितुं।
भुज—भोत्तुं, भुञ्जितुं।
प + हा—पजहितुं, पहातुं।
ञा—ञातुं, जानितुं।
गह—गहेतुं; गण्हितुं।

तवे—

कर + तवे = कत्तवे, कातवे ।

नी—नेतवे ।

विप्प + हा—विप्पहातवे ।

नि + धा—निधातवे ।

कहीं-कहीं तुम् अर्थ में ताये और तुये प्रत्यय भी देखे जाते हैं। यथा—दिस (दृश्) + ताये = दक्खिताये; गण + तुये = गणेतुये। मर (मृ) + तुये = मरितुये ।

समास-प्रकरण

समास-प्रकरण पाली में भी प्रायः संस्कृत के ही समान है। समास के भेद भी प्रायः समान हैं; परंतु कहीं-कहीं पाली में संस्कृत के नियम से विपरीत प्रकार के समास भी देखे जाते हैं। इनका विवेचन नीचे किया जाता है। पाली और संस्कृत में प्रधान अंतर है, संधि-विषयक नियम में। संस्कृत में * 'संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः। नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते' इस नियम के अनुसार समास में संधि होना आवश्यक है, परंतु पाली में कभी-कभी इस नियम का पालन नहीं होता। यथा—'ज्वलित पज्वलित महा अग्गिक्खन्धो;' 'सनेगम जनपद—अमच्च...परिवुतो;' 'आवट्ट—ऊमि वेगजनितं हलाहतसद्दं,' 'इति आदिसु पालिसु' इत्यादि।

संस्कृत के समान पाली में भी अव्ययीभाव, तत्पुरुष (इसी के अंतर्गत कर्मधारय और द्विगु), द्वंद्व और बहुव्रीहि ये समास के भेद हैं। संस्कृत के व्याकरण-ग्रंथों में इनका विवेचन पूर्णतया किया

---

* अर्थात् एक ही पद में, धातु और उपसर्ग में तथा समास में संहिता (संधि) नित्य होती है। केवल वाक्य में बोलनेवाले की इच्छा पर निर्भर है, चाहे संधि की जाय चाहे न की जाय।

गया है। यहाँ उन सब नियमों के उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। केवल विशेष-विशेष नियमों का ही यहाँ विवेचन होगा।

अव्ययीभाव में, पाली और संस्कृत में कोई अंतर नहीं है। उपगंगं, अनुरथं, यावजीवं इत्यादि प्रयोग सब संस्कृत के आधार पर हैं। संस्कृत में अप परि बहि आदि अव्ययों के योग में पंचमी का विकल्प से लोप होता है। यह वैकल्पिक रूप भी पाली में उसी प्रकार स्वतंत्र रूप से व्यवहृत होता है। यथा अपपब्बता अथवा अपपब्बतं; बहिगामा अथवा बहिगामं इत्यादि।

तत्पुरुष

द्वितीया तत्पुरुष—अरञ्ञ + गतो—अरञ्ञगतो; सुखं—प्राप्तः सुखप्राप्तः।

तृतीया तत्पुरुष (ततिय तप्पुरिस)—बुद्धभासितो।

विञ्ञुगरहितो, सुकाहटं, जच्चंधो।

कहीं-कहीं मध्यम पद का लोप हो जाता है। यथा—

गुळेन संसट्ठो ओदनो—गुळोदनो।

अस्सेन युतो रथो—अस्सरथो।

चतुर्थी तत्पुरुष (चतुत्थी तप्पुरिस)—

संघभत्तं, बुद्धदेय्यं।

पञ्चमी तत्पुरुष (पञ्चमी तप्पुरिस)—

नगरम्हा निग्गतो—नगरनिग्गतो।

रुक्खस्मा पतितो—रुक्खपतितो।

सासनम्हा चुतो—सासनचुतो।

चोरा भीतो—चोरभीतो।

पापभीरुको, पापजिगुच्छि, बन्धनमोक्खो।

षष्ठी तत्पुरुष—इसमें प्रथम पद में स्थित दीर्घ ई और ऊ प्रायः ह्रस्व हो जाते हैं।

नदिया तीरं—नदितीरं।

भिक्खुनीनं संघो—भिक्खुनिसंघो।

नरानं उत्तमो—नरुत्तमो।

सप्तमी तत्पुरुष (सत्तमी तप्पुरिस)

अरञ्ञेवासो—अरञ्ञवासो।

धम्मरतो; वनचरो; थलट्ठो; पब्बतट्ठो इत्यादि।

अलुत्त तप्पुरिस—इसमें पूर्व पद की विभक्ति का लोप नह होता—संस्कृत में इसे अलुक् समास कहते हैं—

पभंकरो; परस्सपदं; अत्तनोपदं; कुतोजो; अंतेवासिको; उरसिलोमो।

कम्मधारय

(१) कर्मधारय समास में विशेषण महन्त के स्थान में महा हो जाता है। (स्मरण रहे कि संस्कृत की ही यह छाया है) और यदि परवर्ती व्यंजन को द्वित्व होता है तो महा न होकर मह होता है।

महन्तो पुरिसो—महापुरिसो।

महन्तो नदी—महानदी।

महन्तं भयं—महब्भयं।

(२) संत (संस्कृत—सत्) शब्द के स्थान में पाली में स होता है।

(३) यदि कर्मधारय के दोनों पद स्त्रीलिंगांत रहते हैं तो पूर्व स्त्रीलिंग पद को पुंवद्भाव होता है। अर्थात् वहाँ उसके पुल्लिंग का रूप होता है।

(४) संस्कृत के समान पाली में भी नञ् के नकार के स्थान में व्यंजन से पूर्व अकार तथा स्वर से पूर्व अन होता है। यथा—

असब्भं, अप्पमादो, अनत्थो, अनसुय्यं।

(५) कुत्सित और हीन अर्थ को द्योतित करनेवाले 'कु के स्थान में व्यञ्जन से पूर्व क और स्वर से पूर्व कद् होता है।

द्विगु

द्विगु समास के दो भेद हैं—

(१) समाहार द्विगु—यह समूहवाचक होने के कारण सामान्यतः एकवचन और नपुंसकलिंग में होता है।

(२) असमाहार—इसमें समूह का ज्ञान न होकर उतने संख्यक व्यक्तियों का बोध होता है।

समाहार द्विगु—

तिलोकं—तीन लोकों का समूह।

तिरतनं—सत्ताहं, पंच सिक्खा पदं।

चतुसच्चं, द्विरत्तं, पञ्चगव।

असमाहार

तिभवा—तीन जन्म—पृथक्-पृथक्।

चतुदिसा—पञ्चिन्द्रियाणि।

सकटसतानि—चतुसतानि, द्विसतसहस्सानि।

द्वंद्व

द्वंद्व समास में दोनों पद समान रूप से सामर्थ्य रखते हैं। द्वंद्व समास दो प्रकार के हैं। एक वह जिसमें दोनों पद पृथक्-पृथक् अपना महत्त्व रखते हैं और समस्त पद का वचन दोनों पदों के संयुक्त वचन के अनुसार होता है। दूसरा प्रकार है समाहार द्वंद्व। इसमें दोनों पद मिलकर एक समूह का द्योतन करते हैं, अतः नपुंसक लिंग (सामान्यतः) और एकवचन में प्रयुक्त होते हैं। प्राणि के अंग, सेनांग आदि अनेक अर्थों में यह समाहार द्वंद्व होता है। इसका विवेचन संस्कृत व्याकरण में विशदतया किया गया है। प्रायः संस्कृत के आधार पर ही संस्कृत पदों से ही पाली में भी परिवर्तन होते हैं और इसलिये यहाँ उन सब संस्कृत के नियमों के उल्लेख करने की आव-

श्यकता नहीं है। इसी प्रकार द्वंद्व में किस पद का प्रयोग पूर्व में होगा किसका पर में होगा, इसके भी नियम संस्कृत में हैं, तदनुसार ही पाली में प्रयोग होते हैं, इसलिये उन नियमों का उल्लेख करना यहाँ विस्तार-भय से उचित नहीं प्रतीत होता। उदाहरण—

(१) समणा च ब्राह्मणा च समणब्राह्मणा।
देवा च मनुस्सा च देवमनुस्सा।
अग्गी च धूमो च अग्गिधूमा।
धम्मो च अत्थो च धम्मत्था।

(२) मुखनासिकं, छविमंसलोहितं।
जरामरणं, हत्थपाद, हत्थ्यस्सं।

बहुव्रीहि (बहुब्बीहि)

बहुव्रीहि समास अन्यपदप्रधान होता है। अर्थात् बहुव्रीहि में जो दो पद समस्त होते हैं उनके अतिरिक्त एक तीसरे व्यक्ति का बोध होता है। जैसे सुन्दर+अश्व यह यदि घोड़ा को द्योतित करेगा तो सुन्दराश्व यह कर्मधारय समास होगा। परंतु वही यदि न तो सुन्दर को द्योतित करेगा और न अश्व को, प्रत्युत उस पुरुष अथवा उस रथ को जिसके अथवा जिसमें सुन्दर अश्व हों तो सुन्दर और अश्व के अतिरिक्त एक तृतीय व्यक्ति को द्योतित करने के कारण यह बहुव्रीहि समास हुआ। बहुव्रीहि विशेषण हो जाता है, अतः विशेष्य के अनुसार उसके लिंग वचन होते हैं।

यहाँ भी पाली में प्रायः कोई विशेषता नहीं है और संस्कृत के ही आधार पर समास हुए शब्दों में परिवर्तन होकर पाली रूप बनते हैं, इसलिये उसका विशेष उल्लेख यहाँ नहीं किया जाता।

जिस प्रकार संस्कृत में स्त्रीलिंग पूर्वपद के पुंवद्भाव होने के नियम हैं, जिस प्रकार धर्म आदि शब्दों से अनिच् आदि समासांत प्रत्ययों

का विधान है, उसी प्रकार पाली में भी संस्कृत का अनुकरण किया गया है। समास-प्रकरण में पाली की मौलिकता का प्रायः अभाव-सा है। बहुव्रीहि समास के कुछ उदाहरण नीचे दिए जाते हैं—

बहुजनो गामो; दीघजङ्घा इत्थी; दीघजङ्घो पुरिसो ; महापञ्ञो ; पच्चक्खधम्मा; विसुद्धसीलो जनो; छिन्नमूलो रुक्खो; जितिन्द्रियो समणो; विजितमारो भगवा ; दिन्नसुख पुरिसो; छिन्नहत्थो पुरिसो इत्यादि।

उपपद-समास

ये भी बिलकुल संस्कृत के आधार पर स्थित हैं। यथा—कुम्भकारो; ब्रह्मचारी ; रथकारो इत्यादि। समासांत प्रत्ययों के लिये भी संस्कृत ही आधार है।

कारक और विभक्ति

पाली का कारक-प्रकरण भी प्रायः संस्कृत के समान ही है। कहीं-कहीं थोड़ा-सा अंतर है। सप्तमी के स्थान में कभी-कभी द्वितीया का प्रयोग होता है। यथा—एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति। पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा ; एकं अन्तं इत्यादि।

कभी-कभी सप्तमी के स्थान में तृतीया होती है। यथा—तेन खो पन-समयेन भगवा एतदवोच (तस्मिन् खलु पुनः समये भगवान् एतदवोचत्); येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु—यत्र भगवान् तत्र उपसमक्रामिषुः। षष्ठी का प्रयोग बहुलता से होता है। तेलस्स ददाति (तेल देता है) यहाँ कर्म के स्थान में षष्ठी का प्रयोग है।

कभी-कभी सप्तमी के स्थान में षष्ठी होती है, यदि किसी विषय में कुशलता द्योतित करनी हो। यथा कुशला नच्च गीतस्स।

अन्य कारक संस्कृत के समान होते हैं।

तद्धित-प्रकरण

धातुओं से साक्षात् प्रत्यय लगकर जो प्रातिपदिक बनते हैं वे कृत्

प्रत्ययांत कहलाते हैं। प्रातिपदिक से अपत्य इत्यादि अर्थ में प्रत्यय लगकर जो दूसरे प्रातिपदिक बनते हैं वे तद्धित प्रत्ययांत कहलाते हैं। संस्कृत में तद्धित प्रत्ययों का बहुत विस्तार से वर्णन किया गया है। पाली में प्रायः संस्कृत प्रत्ययांत में परिवर्तन होता है, परंतु कहीं-कहीं पाली के रूप से भी प्रत्यय होते हैं। ऐसे कुछ प्रत्ययों का विवेचन नीचे किया जाता है जिन्हें तद्धित प्रत्ययों की विशेषता देखनी हो वे मूल संस्कृत में अवलोकन करें।

जात—उत्पन्न आदि अर्थ में इम प्रत्यय होता है। यथा—पच्छा (पश्चात्) + इम = पच्छिमो (संस्कृत पश्चिमः)
अन्त + इम = अन्तिमो; मज्झ + इम = मज्झिमो।
हेट्ठा + इम = हेट्ठिमो।

संस्कृत में योग्य अर्थ में कृदंत प्रत्यय अनीयर होता है जैसे वन्द् धातु से वन्दन करने योग्य अर्थ में वन्दनीय होता है। परंतु इसी प्रकार 'स्थान'वाचक होने पर बन्धन इत्यादि पदों से पाली में ईय प्रत्यय होता है जैसे बन्धन का स्थान बन्धनीय कहलाता है। मदन का स्थान मदनीय, मुच्चनस्स (मोचनस्स) + ईय = मुच्चनीय; उपादान + ईय = उपादानीय।

कुछ प्रत्यय ऐसे भी मिलते हैं जो केवल पाली की ही संपत्ति समझे जा सकते हैं। न तो संस्कृत में उनकी समानता कहीं मिलती है और न बाद की भाषाओं में ही कहीं उनका पता चलता है। ऐसे प्रत्ययों में से एक प्रत्यय है 'आयितत्त।' उपमा द्योतित होने पर उपमावाची शब्द से उत्तर आयितत्त प्रत्यय होता है। जैसे—धुवो विय दिस्सति इति धुवायितत्तं इसी प्रकार तिमिरायितत्तं भी होता है। संस्कृत आचारार्थक क्यङ् प्रत्यय होकर आत्मनेपद होता है। ध्रुव इव आचरति ध्रुवायते। ज्ञात होता है इसी के आधार पर ध्रुवायते से धुवायितत्त रूप बनता है।

'वह उससे आश्रित' अथवा 'वह उसका स्थान है' इस अर्थ में पाली में ल्ल प्रत्यय होता है। दुट्ठु निस्सितं अथवा दुट्ठु ठानं इस अर्थ में दुट्ठुल्ल रूप होता है। इसी प्रकार वेदनिस्सितं अथवा वेदस्सठानं इस अर्थ में वेदल्ल होता है।

भावार्थक त्व के अर्थ में पाली में त्तन प्रत्यय होता है। पुथुज्जनस्स भावो (पृथग्जनस्य भावः) पुथुज्जनत्तनं।

एवं—वेदनस्स भावो—वेदनत्तनं।

इसी अर्थ में पाली में ब्य प्रत्यय भी होता है। दासब्यं।

एय्य प्रत्यय भी कहीं-कहीं होता है। यथा आलसेय्यं।

निर्धारणार्थक प्रत्यय तरप् तमप् और इष्ठन् के समान पाली में तर तम और इट्ठ के अतिरिक्त इस्सिक तथा इय प्रत्यय भी होते हैं। यथा—पापतरो, पापतमो, पापिस्सिको, पापियो, पापिट्ठो, पटुतरो, पटुतमो, पटिस्सिको, पटियो, पटिट्ठो।

संस्कृत में 'इतने बार' द्योतित करने के लिये संख्यावाचक शब्द से कृत्वसुच् (कृत्वः) प्रत्यय होता है। जैसे कोई मनुष्य दिन में पाँच बार भोजन करता है, तो उसके लिये प्रयोग होगा पञ्चकृत्वः अह्नो भोजनम्। पाली में इस कृत्वः के स्थान में क्खत्तुं होता है। पञ्चकृत्वः के स्थान में पाली में पंचक्खत्तुं होगा। इसी तरह एकक्खत्तुं, द्विक्खत्तुं, तिक्खत्तुं इत्यादि प्रयोग होंगे।

संस्कृत में लोम शब्द से श प्रत्यय होकर लोमश शब्द बनता है और उसका अर्थ होता है अधिक रोमवाला। उसी के ढंग पर पाली में भी लोमसो रूप तो होता ही है अन्यान्य शब्दों से भी 'स' प्रत्यय इसी अर्थ में पाया जाता है। यथा मेधासो।

स्त्रीप्रत्यय

अन्य प्रकरणों के समान इस प्रकरण में भी पाली के ही कुछ विशेष नियमों का उल्लेख किया जाता है।

संस्कृत में इन् प्रत्ययांत शब्दों से ई प्रत्यय (ङीप्) होता है यथा—ब्रह्मचारिन् = ब्रह्मचारिणी; ध्वजिन् = ध्वजिनी; मनस्विन् = मनस्विनी। पाली में भी इन् प्रत्ययांतों से तो ई प्रत्यय होता ही है, परंतु प्रायः अन्य इकारांत उकारांत शब्दों से भी नी प्रत्यय होता है। कहीं-कहीं ई और इनी दोनों प्रत्यय होते हैं यथा—हत्थि = हत्थिनी। बन्धु = बन्धुनी । भिक्खु = भिक्खुनी । पटु = पटुनी। यक्ख = यक्खिनी। नाग = नागिनी। सीह = सीही, सीहिनी। मिग = मिगी, मिगिनी। वर्तमान हिंदी में भी इस नी का प्रभाव पड़ा है और जिस प्रकार संस्कृत में आचार्याणी, इंद्राणी, भवानी आदि स्त्रीप्रत्ययांत पद होते हैं उसी के आधार पर पाली में गहपति से गहपतानी आदि प्रयोग पाए जाते हैं और हिंदी में पण्डितानी आदि प्रयोगों का मूल इसी में मिलता है।

पाली में बहुत-से शब्दों में आ और ई तथा इनी तीनों प्रत्यय पाए जाते हैं।

यथा—मातुल = मातुला, मातुली, मातुलिनी। कुम्भकार = कुम्भकारा। कुम्भकारी। यक्ख = यक्खी, यक्खिनी।

अत्थकाम = अत्थकामा, अत्थकामी, अत्थकामिनी।

पाठावली

धम्म पद से

यो च वस्ससतं जन्तु अग्गिं परिचरे वने ;
एकञ्च भावितत्तानं मुहुत्तमपि पूजये ।
सा येव पूजना सेय्यो यञ्चे वस्ससतं हुतं ;
अभिवादनसीलिस्स निच्चं बद्धापचायिनो ।
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति आयु वण्णो सुखं बलं ;
यो च वस्ससतं जीवे दुस्सीलो असमाहितो ।
एकाहं जीवितं सेय्यो पञ्ञावन्तस्स झायिनो ;
सब्बे तसन्ति दण्डस्स सब्बे भायन्ति मच्चुनो ।
अत्तानं उपमं कत्वा न हनेय्य न घातये ;
सुखकामानि भूतानि यो दण्डेन विहिंसति ।
अत्तनो सुखमेसानो पेच्च सो न लभते सुखं ;
अत्ता हि अत्तनो नाथो को हि नाथो परो सिया ।
अत्तना हि सुदन्तेन नाथं लभति दुल्लभं ;
न हि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचनं ।
अवेरेन च सम्मन्ति एस धम्मो सनन्तनो ;
सेलो यथा एकघनो वातेन न समीरति ।
एवं निन्दापसंसासु न समिञ्जन्ति पण्डिता ;
कोधं जहे विप्पजहेय्य मानं संयोजनं सब्बमतिक्कमेय्य ।
तं नामरूपस्मिँ असज्जमानं अकिञ्चनं नानुपतन्ति दुक्खा ;

योो वे उप्पतितं कोधं रथं भन्तं व धारये ।
तमहं सारथिं ब्रूमि रस्मिग्गाहो इतरो जनो ;
अक्कोधेन जिने कोधं असाधुं साधुना जिने ।
जिने कदरियं दानेन सच्चेन अलीकवादिनं ;

न तेन थेरो होति येनस्स फलितं सिरो ।
परिपक्को वयो तस्स मोघजिण्णोति वुच्चति ;
यम्हि सच्चं च धम्मो च अहिंसा संयमो दमो ।
स वे वन्तमलो धीरो थेरोति पवुच्चति ;

सब्बे सङ्खारा अनिच्चाति यदा पञ्ञाय पस्सति ।
अथ निब्बिन्दती दुक्खे एस मग्गो विसुद्धिया ;

दिवा तपति आदिच्चो रत्तिं आभाति चन्दिमा ।
सन्नद्धो खत्तियो तपति झायी तपति ब्राह्मणो ;
अथ सब्बमहोरत्तं बुद्धो तपति तेजसा ।
न जटाहि न गोत्तेन न जच्चा होति ब्राह्मणो ;
यम्हि सच्चं च धम्मो च सो सुखी सो च ब्राह्मणो ।

धम्मपद की टीका से उद्धृत

न पुप्फगन्धो पटिवातमेति न चन्दनं तगरमल्लिका व ;
सतं च गन्धो पटिवातमेति सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवाति ।
चन्दनं तगरं वापि उप्पलं अथ वस्सिकी ;
एतेसं गन्धजातानं सीलगन्धो अनुत्तरो ति ।

तत्थ न पुप्फगन्धोति तावतिंसभवने पारिच्छत्तको आयामतो च वित्थारतो च योजनसतिको, तस्स पुप्फानं आभा पञ्ञास योजनानि गच्छति, गन्धो योजनसतं, सोपि अनुवातं एव, पटिवातं पन अंगुलं पि गन्तुं न सक्कोति, एवरूपो पि न पुप्फगन्धो पटिवातं एति । चन्दनं ति चन्दनगन्धो । तगरमल्लिका वाति इमेसं पि गन्धो एव अधिप्पेतो,

सारगन्धानं अग्गस्स लोहितचन्दनस्सापि तगरमल्लिकाय पि अनुवातं एव याति नो पटिवातं। सतञ्च गन्धो ति सप्पुरिसानं पन बुद्धपच्चेक-बुद्धसावकानं सीलगन्धो पटिवातं एति। किङ्कारणा ? सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवाति यस्मा सप्पुरिसो सीलगन्धेन सब्बा दिसा अज्झोत्थरित्वा गच्छति तस्मा तस्स गन्धो पटिवातमेतीति वत्तब्बो, तेन वुत्तं पटिवातमेति ति। वास्सिकी ति जातिसुमना। एतेसं ति इमेसं चन्दनादीनं गन्धजातानं गन्धतो सीलवन्तानं सप्पुरिसानं सीलगन्धो व अनुत्तरो असादिसो अप्पाटिभागो ति।

देसनावसाने बहू सोतापत्तिफलादीनि पत्ता, देसना महाजनस्स सात्थिका जाता ति।

बालनक्खत्तघुट्ठवत्थु

एकस्मिं हि समये सावत्थियं बालनक्खत्तं नाम घुट्ठं, तस्मिं नक्खत्ते बालदुम्मेधजना चारिकाय चेव गोमयेन च सरीरं मक्खेत्वा सत्ताहं असब्भं भणन्तो विचरन्ति; तस्मिं जातिसुहज्जे वा पब्बजितं वा दिस्वा लज्जन्तो नाम नत्थि, द्वारे ठत्वा असब्भं भणन्ति, मनुस्सा तेसं असब्भं सोतुं असक्कोन्ता यथाबलं अड्ढं वा कहापणं वा पेसेन्ति; ते तेसं घरे लद्धं लद्धं गहेत्वा पक्कमन्ति। तदा पन सावत्थियं पञ्चकोटिमत्ता अरियसावका, ते सत्थु संतिकं पेसयिंसुः भगवा भन्ते सत्ताहं भिक्खुसंघेन सद्धिं नगरं अपविसित्वा विहारे येव होतू ति। तं च पन सत्ताहं भिक्खुसंघस्स विहारे येव यागुभत्तादीनि सम्पादेत्वा सयं पि गेहा न निक्खमिंसु। नक्खत्ते पन परियोसिते अट्ठमे पन दिवसे बुद्धपमुखं भिक्खुसंघं निमन्तेत्वा नगरं पवेसेत्वा महादानं दत्वा एकमन्तं निसिन्ना, 'भन्ते अतिदुक्खेन नो सत्त दिवसा अतिक्कन्ता बालानं असब्भानं सुणन्तानं कण्णा भिज्जनाकारप्पत्ता होन्ति, कोचि कस्सचि न लज्जति, तेन मयं तुम्हाकं अन्तो नगरं पविसितुं न दम्ह, मयं पि गेहतो न निक्खमिम्हा' ति आहंसु। सत्था तेसं कथं

सुत्वा 'बालानं दुम्मेधानं किरिया नाम एव रूपा होति, मेधाविनो पन धनसारं विय अप्पमादं रक्खित्वा अमतमहानिब्बानसम्पत्तिं पापुणन्ति' वत्वा इमा गाथा अभासि—

पमादं अनुयुञ्जन्ति बाला दुम्मेधिनो जना ;
अप्पमादं च मेधावी धनं सेट्ठं व रक्खति ।
मा पमादं अनुयुञ्जेथ मा कामरतिसन्थवं ;
अप्पमत्तो हि झायन्तो पप्पोति विपुलं सुख ति ।

निर्वाण

यथा हि लोके दुक्खस्स पटिपक्खभूतं सुखं नाम अत्थि, भवे सति तप्पटिपक्खेन विभवेनापि भवितब्ब, यथा च उण्हे सति तस्स वूपसमभूतं सीतम्पि अत्थि, एवं रागादीनं वूपसमेन निब्बाणेनापि भवितब्बं । यथा पापकस्स लामकस्स धम्मस्स पटिपक्खभूतो कल्याणो अनवज्ज धम्मोपि अत्थि येव, एवमेव पापिकाय जातिया सति सब्बजातिक्खेपनतो अजातिसंखातेन निब्बाणेनापि भवितब्बमेव तिन वुत्तं—

"यथापि दुक्खे विज्जन्ते सुखं नामापि विज्जति ;
एवं भवे विज्जमाने विभवोपि इच्छितब्बको ।
यथापि उण्हे विज्जन्ते अपरं विज्जति सीतलं ;
एवं तिविधग्गि विज्जन्ते निब्बानं इच्छितब्बकं ।
यथापि पापे विज्जन्ते कल्याणमपि विज्जति ;
एवं जातिम्हि विज्जन्ते अजातिम्पि इच्छितब्बकन्ति ।"

यथा नाम थगूरासिम्हि निमग्गेन पुरिसेन दूरतो पञ्चवण्णपदुमसञ्छन्नं महातळाकं दिस्वा 'कतरेन नु खो मग्गेन एत्थ गन्तब्बन्ति' तं तळाकं गवेसितुं युत्तं, यं तस्स अगवेसनं न सो तळाकस्स दोसो; एवं किलेसमलधोवने अमतमहानिब्बानतळाके विज्जन्ते तस्स अगवेसनं न अमतमहानिब्बानमहातळाकस्स दोसो । यथा हि चोरे

हि संपवारितो पुरिसो पलायनमग्गे विज्जमानेपि स चे न पलायति, न सो मग्गस्स दोसो पुरिसस्सेव दोसो; एवमेव किलेसेहि परिवारेत्वा गहितस्स पुरिसस्स विज्जमाने येव निब्बानगामिम्हि सिवे मग्गे, मग्गस्स अगवेसनं नाम न मग्गस्स दोसो, पुग्गलस्सेव दोसो। यथा च व्याधिपीळितो पुरिसो विज्जमाने व्याधितिकिच्छके वेज्जे, सचे तं वेज्जं गवेसित्वा व्याधिं न तिकिच्छापेति, न सो वेज्जस्स दोसो; एवमेव यो किलेसव्याधिपीळितो किलेसवूपसमनमग्गकोविदं विज्जमानमेव आचरियं न गवेसति, तस्सेव दोसो, न किलेसविनासकस्स आचरियस्साति।

तेन वुत्तं—

यथा गूथगतो पुरिसो तळाकं दिस्वान पूरितं;
न गवेसति तं तळाकं न दोसो तळाकस्स सो।
एवं किलेसमलधोवे विज्जन्ते अमतन्तले;
न गवेसति तं तळाकं न दोसो अमतन्तले।
यथा अरीहि परिरुद्धो विज्जन्ते गमने पथे;
न पलायति सो पुरिसो न दोसो अञ्जसस्स सो।
एवं किलेसपरिरुद्धो विज्जमाने सिवे पथे;
न गवेसति तं मग्गं न दोसो सिवमञ्जसे।
यथापि व्याधितो पुरिसो विज्जमाने तिकिच्छके;
न तिकिच्छापेति तं व्याधिं न सो दोसो तिकिच्छके।
एवं किलेसव्याधीहि दुक्खितो परिपीळितो;
न गवेसति तं आचरियं न सो दोसो विनायकेति।

दसरथजातकं

अतीते बाराणसियं दसरथमहाराजा नाम अगतिगमनं पहाय धम्मेन रज्जं कारेसि। तस्स सोळसन्नं इत्थिसहस्सानं जेट्ठिका अग्गमहेसी द्वे पुत्ते एकं च धीतरं विजायि। जेट्ठपुत्तो रामपण्डितो नाम अहोसि, दुतियो लक्खणकुमारो नाम, धीता सीतादेवी नाम।

अपरभागे अग्गमहेसी कालं अकासि । राजा तस्सा कालकताय चिरं सोकवसं गत्वा अमच्चेहि सञ्ञापितो तस्सा कत्तब्बपरिहारं कत्वा अञ्ञं अग्गमहेसिट्ठाने ठपेसि । सा रञ्ञो पिया अहोसि मनापा । सापि अपरभागे गब्भं गण्हित्वा लद्धगब्भपरिहारा पुत्तं विजायि, भरतकुमारो तिस्स नामं करिंसु । राजा पुत्तसिनेहेन 'भद्दे वरं ते दम्मि, गण्हाहीति' आह । सा गहितकं कत्वा ठपेत्वा कुमारस्स सट्ठ वस्स काले राजानं उपसंकमित्वा 'देव, तुम्हेहि मय्हं पुत्तस्स वरो दिन्नो, इदानिस्स नं देथाति' आह । 'गण्ह भद्दे ति ।' 'देव, पुत्तस्स मे रज्जं देथाति ।'

राजा अच्छरं पहरित्वा 'नस्स वसलि ! मय्हं द्वे पुत्ता अग्गिक्खन्धा विय जलन्ति ते मारापेत्वा तव पुत्तस्स रज्जं याचसीति' तज्जेसि । सा भीता सिरिगब्भं पविसित्वा अञ्ञेसु दिवसेसु राजानं पुनप्पुन रज्ज-मेव याचि । राजा तस्सा तं वरं अदत्वा—व चिन्तेसि—'मातुगामो नाम अकतञ्ञू मित्तदूभी; अयं मे कूटपण्णं वा कूटलञ्चं वा कत्वा पुत्ते घातापेय्याति' सो पुत्ते पक्कोसापेत्वा तं अत्थं आरोचेत्वा 'तात तुम्हाकं इध वसन्तानं अन्तरायोपि भवेय्य ; तुम्हे सामन्तरज्जं वा अरञ्ञं वा गन्त्वा मम धूमकाले आगन्त्वा कुलसन्तकं रज्जं गण्हेय्या-थाति' वत्वा पुन नेमित्तिके पक्कोसापेत्वा अत्तनो आयुपरिच्छेदं पुच्छित्वा 'अञ्ञानि द्वादस वस्सानि पवत्तिस्सतीति' सुत्वा 'तात इतो द्वादसवस्सच्चयेन आगन्त्वा छत्तं उस्सापेय्याथाति' आह । ते साधू-ति वत्वा पितरं वन्दित्वा रोदन्ता पासादा ओतरिंसु । सीतादेवी अहम्पि भातिकेहि सद्धिं गमिस्सामीति पितरं वन्दित्वा रोदन्ती निक्खमि । ते तयोपि महाजनपरिवारा निक्खमित्वा महाजनं निव-त्तेत्वा अनुपुब्बेन हिमवन्तं पविसित्वा सम्पन्नोदके सुलभफलाफले पदेसे अस्समं मापेत्वा फलाफलेन यापेन्ता वसिंसु । लक्खण पण्डितो पन सीता च रामपण्डितं याचित्वा 'तुम्हे अम्हाकं पितुट्ठाने ठिता, तस्मा

अस्समे येव होथ, मयं फलाफलं आहरित्वा तुम्हे पोसेस्सामाति' पटिञ्ञं गण्हिंसु। ततो पट्ठाय रामपण्डितो तत्थेव होति, इतरे फलाफलं आहरित्वा तं पटिजग्गिंसु। एवं तेसं फलाफलेन यापेत्वा वसन्तानं दसरथमहाराजा पुत्तसोकेन नवमे संवच्छरे कालं अकासि। तस्स सरीरकिच्चं कारेत्वा देवी अत्तनो पुत्तस्स भरतकुमारस्स 'छत्तं उस्सापेथाति' आह। अमच्चा पन 'छत्तसामिका अरञ्ञे वसन्तीति' न अदंसु। भरतकुमारो 'मम भातरं रामपण्डितं अरञ्ञा आनेत्वा छत्तं उस्सापेस्सामीति' पञ्चराजककुधभण्डानि गहेत्वा चतुरङ्गिनिया सेनाय तस्स वसनट्ठानं पत्वा अविदूरे खन्धावारं निवासेत्वा कतिपयेहि अमाच्चेहि सद्धिं लक्खणपण्डितस्स च सीताय च अरञ्ञं गतकाले अस्समपदं पविसित्वा अस्समपदद्वारे सुट्ठ ठपित कञ्चनरूपकं विय रामपण्डितं निरासङ्कं सुखनिसिन्नं उपसङ्कमित्वा वन्दित्वा एकमन्तं ठितो रञ्ञो पवत्तिं आरोचेत्वा सद्धिं अमच्चेहि पादेसु पतित्वा रोदि। रामपण्डितो नेव सोचि न रोदि, इन्द्रियविकारमत्तम्पिस्स नाहोसि। भरतस्स पन रोदित्वा निसिन्नकाले सायण्हसमये इतरे द्वे फलाफले आदाय आगमिंसु। रामपण्डितो चिन्तेसि 'इमे दहरा, मय्हं विय परिग्गण्हनपञ्ञा एतेसं नत्थि, सहसा 'पिता वो मतोति' वुत्ते सोकं धारेतुं असक्कोन्तानं हदयम्पि तेसं फलेय्य। उपायेन ते उदकं ओतारेत्वा एतं पवत्तिं सावेस्सामीति।' अथ नेसं पुरतो एकं उदकट्ठानं दस्सेत्वा 'तुम्हे अतिचिरेन आगता, इदं वो, दण्डकम्मं होतु—इमं उदकं ओतरित्वा तिट्ठथा—ति' उपड्ढगाथं ताव आह।

'एथ लक्खण सीता च उभो ओतरथोदकन्ति।' ते एकवचनेन ओतरित्वा अट्ठंसु। अथ नेसं तं पवत्तिं आरोचेन्तो सेसं उपड्ढगाथमाह—

'एवायं भरतो आह राजा दसरथो मतोति।'

ते पितु मतसासनं सुत्वा व विसञ्ञा अहेसुं। पुन-पि नेसं कथेसि,

पुन विसञ्ञा अहेसुन्ति । एवं यावततियं विसञ्ञितं पत्ते ते अमच्चा उक्खिपित्वा उदका नीहरित्वा थले निसीदापेत्वा लद्धस्सासेसु तेसु सब्बं अञ्ञमञ्ञं रोदित्वा परिदेवित्वा निसीदिंसु । तदा भरतकुमारो चिन्तेसि—'मय्हं माता लक्खणकुमारो भगिनी च सीतादेवी पितु-मत सासनं सुत्वा-व सोकं संधारेतुं न सक्कोन्ति, रामपण्डितो पन न सोचति न परिदेवति, किन्नु खो तस्स असोचनकारणं, पुच्छिस्सामि नन्ति' सो तं पुच्छन्तो दुतियगाथमाह—

'केन रामप्पभावेन सोचितब्बं न सोचसि ;
पितरं कालकतं सुत्वा न तं पसहते दुखन्ति ।'

अथ स्स रामपण्डितो अत्तनो असोचनकारणं कथेन्तो

'यं न सक्का पालेतुं पोसेन लपतं बहुं ;
स कस्स विञ्ञू मेधावी अत्तानमुपतापये ।
दहरा च हि वुद्धा च ये बाला ये च पण्डिता ;
अड्ढा चेव दलिद्दा च सब्बे मच्चुपरायणा ।
फलानमिव पक्कानं निच्चं पपतना भयं ;
एवं जातानं मच्चानं निच्चं मरणतो भयं ।
सायमेके न दिस्सन्ति पातो दिट्ठा बहुज्जना ;
पातो एकेन दिस्सन्ति सायं दिट्ठा बहुज्जना ।
परिदेवयमानो चे किञ्चिदत्थमुदब्बहे ;
सम्मूळ्हो हिंसमत्तानं कयिरा चेनं विचक्खणो ।
किसो विवण्णो भवति हिंसमत्तानमत्तनो ;
न तेन पेता पालेन्ति निरत्था परिदेवना ।
यथा सरणमादित्तं वारिना परिनिब्बये ;
एवम्पि धीरो सुत्वा मेधावी पण्डितो नरो ।
खिप्पमुप्पतितं सोकं वातो तूलं व धंसये ;
एकोव मच्चो अच्चेति एकोव जायते कुले ।

सन्तोसपरमा त्वेव सम्भोगा सब्बपाणिनं ;
तस्माहि धीरस्स बहुस्सुतस्स सम्पस्सतो लोकमिमं परञ्च ;
अञ्ञाय धम्मं हदयं मनञ्च सोका महन्तापि न तापयन्ति ।
सोहं दस्सञ्च भोक्खञ्च भरिस्सामि च ञातके ;
सेसं सम्पालयिस्सामि किच्चमेवं विजानतोति ।'

इमाहि गाथाहि अनिच्चतं पकासेसि ।

परिसा इमं रामपण्डितस्स अनिच्चतापकासनिं धम्मदेसनं सुत्वा निस्सोका अहोसि। ततो भरतकुमारो रामपण्डितं वन्दित्वा 'बाराणसिरज्जं पटिच्छथा—ति' आह । 'तात, लक्खणञ्च सीतादेविञ्च, गहेत्वा रज्जं अनुसासथा—ति ।' 'तुम्हे पन देवाति ?' 'तात, मम पिता द्वादस वस्सच्चयेनागन्त्वा रज्जं करेय्य.सीति' मं अवोच, अहं इदानेव गच्छन्तो तस्स वचनकरो नाम न होमि । अञ्ञानि पन तीणि वस्सानि अतिक्कमित्वा आगमिस्सामीति ।' 'एत्तकं कालं को रज्जं कारेस्सतीति?' 'तुम्हे करोथाति ।' 'न मयं कारेस्सामाति ।' 'तेन हि याव मम आगमना इमा पादुका कारेस्सन्तीति' अत्तनो तिणपादुका ओमुञ्चित्वा अदासि । ते तयोपि जना पादुका गहेत्वा पण्डितं वन्दित्वा महाजनपरिवुता बाराणसिं अगमंसु । तीणि संवच्छरानि पादुका रज्जं कारेसुं । अमच्चा तिणपादुका राजपल्लङ्के ठपेत्वा अट्टं विनिच्छिनन्ति । सचे दुब्बिनिच्छितो होति, पादुका अञ्ञमञ्ञं पटिहञ्ञन्ति, ताय सञ्ञाय पुन विनिच्छिनन्ति । सम्माविनिच्छितकाले पादुका निस्सद्दा सन्निसादन्ति । पण्डितो तिण्णं संवच्छरानं अच्चयेन अरञ्ञा निक्खमित्वा बाराणसिनगरं पत्वा उय्यानं पविसि । तस्सागतभावं ञत्वा कुमारा अमच्चपरिवुता उय्यानं गन्त्वा सीतं अग्ग महेसिं कत्वा उभिन्नम्पि अभिसेकं करिंसु । एवं अभिसेकप्पत्तो महासत्त्वो अलङ्कतरथे ठत्वा महन्तेन परिवारेन नगरं पविसित्वा पदक्खिणं कत्वा सुचन्दकपासादवरस्स महातलं अभिरुय्ह ततो पट्ठाय सोळसवस्ससहस्सानि धम्मेन रज्जं करित्वा सग्गपदं पूरेसि ।

दसवस्ससहस्सानि सट्ठिवस्स सतानि च;
कम्बुगीवो महाबाहु रामो रज्जमकारयीति।

राजोवादजातक

अतीते वाराणसियं ब्रह्मदत्ते रज्जं कारेन्ते बोधिसत्तो तस्स अग्गमहेसिया कुच्छिस्मिं पटिसन्धिं गहेत्वा लद्धगब्भपरिहारो सोत्थिना मातुकुच्छिम्हा निक्खमि। नामगहणदिवसे पनस्स ब्रह्मदत्तकुमारो त्वेव नामं अकंसु। सो अनुपुब्बेन वयप्पत्तो सोळसवस्सकाले तक्कसिलं गन्त्वा सब्बसिप्पेसु निप्फत्तिं पत्वा पितु अच्चयेन रज्जे पतिट्ठाय धम्मेन समेन रज्जं कारेसि, छन्दादिवसेन अगन्त्वा विनिच्छयं अनुसासि। तस्मिं एवं धम्मेन रज्जं कारेन्ते अमच्चापि धम्मेनेव वोहारं विनिच्छिनिंसु, वोहारेसु धम्मेन विनिच्छयमानेसु कूटट्टकारका नाम नाहेसुं। तेसं अभावा अट्टत्थाय राजङ्गणे उपरवा पच्छिज्जि। अमच्चा दिवसं पि विनिच्छयट्ठाने निसीदित्वा केचि विनिच्छयत्थाय आगच्छन्ते अदिस्वा पक्कमन्ति। विनिच्छयट्ठानं छड्डेतब्बभावं पापुणि। बोधिसत्तो चिन्तेसिः "मयि धम्मेन रज्जं कारेन्ते विनिच्छयत्थाय आगच्छन्ता नाम नत्थि, उपरवो पच्छिज्जि। विनिच्छयट्ठानं छड्डेतब्बभावं पत्तं, इदानि मया अत्तनो अगुनं परियेसितुं वट्टति, 'अयं नाम मे अगुणो' ति ञत्वा तं पहाय गुणेसु येव वत्तिस्सामीति।" ततो पट्ठाय "अत्थि नु खो मे कोचि अगुणवादीति" परिगण्हन्तो अन्तो वलञ्जकानं अन्तरे कंचि अगुणवादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा 'एते मय्हं भयेनापि अगुणं अवत्वा गुणमेव वदेय्युन्ति' बहिवलञ्जनके परिगण्हन्तो तत्रापि अदिस्वा अन्तो नगरं परिगण्हि, बहिनगरे चतुसु द्वारेसु द्वारगामके परिगण्हि। तत्रापि कञ्चि अगुणवादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा 'जनपदं परिगण्हिस्सामीति' अमच्चे रज्जं पटिच्छापेत्वा रथं आरुय्ह सारथिमेव गहेत्वा अञ्ञातकवेसेन नगरा निक्खमित्वा जनपदं परिगण्हमानो याव

पच्चन्तभूमिं गन्त्वा कञ्चि अगुणवादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा पच्चन्तसीमतो महामग्गेन नगराभिमुखो येव निवत्ति। तस्मिं एतकाले मल्लिको नाम कोसलराजापि धम्मेन रज्जं कारेन्तो अगुणगवेसको हुत्वा अन्तोवलञ्जकादिसु अगुणवादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा जनपदं परिगण्हन्तो तं पदेसं अगमासि। ते उभो पि एकस्मिं निन्ने सकटमग्गे अभिमुखा अहेसुं। रथस्स उक्कमनट्ठानं नत्थि। अथ मल्लिकरञ्ञो सारथि बाराणसिरञ्ञो सारथिं 'तव रथं उक्कमापेहीति' आह। सोपि 'अम्भो सारथि तव रथं उक्कमापेहि, इमस्मिं रथे बाराणसिरज्जसामिको ब्रह्मदत्त महाराजा निसिन्नोति' आह। इतरोपि 'अम्भो सारथि इमस्मिं रथे कोसलरज्जसामिको मल्लिकमहाराजा निसिन्नो, तव रथं उक्कमापेत्वा अम्हाकं रञ्ञो रथस्स ओकासं देहीति' आह। बाराणसि रञ्ञो सारथि 'अयं पि किर राजा येव किन्नु खो कातब्बंति चिन्तेन्तो' 'अत्थेस उपायोः वयं पुच्छित्वा दहरतरस्स रथं उक्कमापेत्वा महल्लकस्स ओकसं दापेस्सामीति' सन्निट्ठानं कत्वा तं सारथिं कोसलरञ्ञो वयं पुच्छित्वा परिगण्हन्तो उभिन्नम्पि समानवयभावं ञत्वा रज्जपरिमाणं बलं धनं यसं जातिं गोत्त-कुलापदेसं ति सब्बं पुच्छित्वा 'उभोपि तियोजन-सतिकस्स रज्जस्स सामिनो समान बल धन यस जाति गोत्त कुलापदेसाति' ञत्वा सीलवन्ततरस्स ओकासं दस्सामीति चिन्तेत्वा सो सारथि 'तुम्हाकं रञ्ञो सीलाचारो कीदिसो' ति पुच्छि। सो 'अयं च अयं च अम्हाकं रञ्ञो सीलाचारोति' अत्तनो रञ्ञो अगुणमेव गुणतो पकासेन्तो पठमं गाथमाह—

दळ्हं दळ्हस्स खिपति मल्लिको मुदुना मुदुं;
साधुम्पि साधुना जेति असाधुम्पि असाधुना।
एतादिसो अयं राजा मग्गा उय्याहि सारथीति।

तत्थ दळ्हं दळ्हस्स खिपतीति—यो दळ्हो होति बलवदळ्हेन पहारेन वा वचनेन वा जिनितब्बो तस्स दळ्हमेव पहारं वा वचनं वा खिपति एवं

दठो हुत्वा तं जिनातीति दस्सेति, मल्लिकोति तस्स रञ्ञो नामं, मुदुना मुदुन्ति, मुदुपुग्गलं सयम्पि मुदु हुत्वा मुदुनाव उपायेन जिनाति। साधुम्पि साधुना जेति असाधुम्पि असाधुना ति ये साधु सप्पुरिसा ते सयम्पि साधु हुत्वा साधुनाव उपायेन, ये पन असाधु, ते सयम्पि असाधु हुत्वा असाधुनाव उपायेन जिनातीति दस्सेति. एतादिसो अयं राजा ति अयं अम्हाकं कोसलराजा सीलाचारेन एव रूपो, मग्गा उय्याहि सारथीति अत्तनो रथं मग्गा उक्कमापेत्वा उय्याहि उप्पथेन याहीति अम्हाकं रञ्ञो मग्गं देहीति वदाति।

अथ तं बाराणसिरञ्ञो सारथि 'अम्भो, किं पन तया अत्तनो रञ्ञो गुणा कथिता' ति वत्वा 'आमाति' वुत्ते यदि एते गुणा अगुणा पन कीदिसाति वत्वा 'एते ताव अगुणा होन्तु, तुम्हाकं पन रञ्ञो कीदिसा गुणा' ति वुत्ते 'तेन हि सुणाहीति' दुतियं गाथमाह—

अक्कोधेन जिने कोधं असाधुं साधुना जिने;
जिने कदरियं दानेन सच्चेनालीकवादिनं।
एतादिसो अयं राजा मग्गा उय्याहि सारथीति।

तत्थ एतादिसो ति एतेहि अक्कोधेन जिने कोधन्ति आदिवसेन वुत्तेहि गुणेहि समन्नागतो, अयं हि कुद्धं पुग्गलं सयं अक्कोधो हुत्वा अक्कोधेन जिनाति, असाधुं पन सयं साधु हुत्वा साधुना, कदरियं थद्धमच्छरिं सयं दायको हुत्वा दानेन, अलीकवादिं मुसावादिं सयं सच्चवादी हुत्वा सच्चेन जिनाति; मग्गा उय्याहीति सम्म सारथि मग्गतो अपगच्छ एवंविध-सीलाचारगुणयुत्तस्स अम्हाकं रञ्ञो मग्गं देहीति अम्हाकं राजा मग्गस्स अनुच्छविकोति।

एवं वुत्ते मल्लिकराजा च सारथि च उभोपि रथा ओतरित्वा अस्से मोचेत्वा रथं अपनेत्वा बाराणसिरञ्ञो मग्गं अदंसु। बाराणसिराजा मल्लिकरञ्ञो नाम 'इदञ्च इदञ्च कातुं वट्टतीति' ओवादं दत्वा बाराणसिं गन्त्वा दानादीनि पुञ्ञानि कत्वा जीवितपरियोसाने सग्गपदं

पूरेसि । मल्लिकराजापि तस्स ओवादं गहेत्वा जनपदं परिग्गहेत्वा अत्तनो अगुणवादिं अदिस्वा व सकनगरं गन्त्वा दानादीनि पुञ्ञानि कत्वा जीवितपरियोसाने सग्गपदमेव पूरेसि ।

महोसधस्स आवाहो

ततो पट्ठाय बोधिसत्तस्स यसो महा अहोसि । तं सब्बं उदुम्बरा देवी येव विचारेति, सा तस्स सोळसवस्सकाले चिन्तेसि: "मम कनिट्ठो महल्लको जातो, यसोपिस्स महा, आवाहमस्स कातुं वट्टतीति," सा रञ्ञो तमत्थं आरोचेसि, राजा तं सुत्वा सोमनस्सप्पत्तो हुत्वा "साधु, जानापेहि नन्" ति आह, सा तं जानापेत्वा तेन सम्पटिच्छिते "तेन हि तात कुमारिकं आनेमा" ति आह, महोसधो 'कदाचि इमेहि आनीता मम न रुच्चेय्य, सयमेव ताव उपधारेमीति' चिन्तेत्वा एवमाह: 'देवि कतिपाहं मा किञ्चि रञ्ञो वदेथ, अहं एकं दारिकं सयं परियेसित्वा मम चित्तरुचितं तुम्हाकं आचिक्खिस्सामीति' "एवं करोहि ताता" ति,

सो देविं वन्दित्वा अत्तनो घरं गन्त्वा सहायकानं सञ्ञं अदत्वा अञ्ञतरवेसेन तुन्नवायउपकरणानि गहेत्वा एकको व उत्तरद्वारेन निक्खमित्वा उत्तरद्वारयवमज्झकं पायासि । तदा पन तत्थ पुराणसेट्ठिकुलं परिजिण्णं अहोसि, तस्स कुलस्स धीता अमरादेवी नाम अभिरूपा सब्बलक्खणसम्पन्ना पुञ्ञवती सा तं दिवसं पातो व यागुं पचित्वा आदाय 'पितु कसनट्ठानं गमिस्सामीति' निक्खमित्वा तमेव मग्गं पटिपज्जि । महासत्तो तं आगच्छन्तिं दिस्वा लक्खणसम्पन्ना इत्थी, स चे अपरिग्गहा इमाय मे पादपरिचारिकाय भवितुं वट्टतीति चिन्तेसि । सापि तं दिस्वा व 'स चे एवरूपस्स पुरिसस्स गेहे भवेय्यं सक्का सिया कुटुम्बं सण्ठपेतुन्' ति चिन्तेसि, अथ महासत्तो 'इमिस्सा सपरिग्गह-अपरिग्गहभावं न जानामि, हत्थमुद्दाय नं पुच्छिस्सामि, सचे पण्डिता भविस्सति जानिस्सतीति' चिन्तेन्तो दूरे ठितो व मुट्ठिं अकासि सा 'अयं मे सस्सामिकभावं पुच्छतीति' ञत्वा हत्थं विकासेसि । सो ञत्वा

समीपं गन्त्वा 'भद्दे, का नाम त्वन्' ति पुच्छि 'सामि, अहं अतीतानागते वा एतरहि वा यं नत्थि तं नामिका' ति भद्दे, लोके अमरन्नाम नत्थि, त्वं अमरा नाम भविस्ससीति 'एवं सामीति' 'भद्दे, कस्स यागुं हरसीति' 'सामि, पुब्बदेवताया' ति 'पुब्बदेवता नाम माता पितरो, तव पितु हरिस्ससि मञ्ञे' ति 'एवं भविस्सति सामीति' तव पिता किं करोतीति' 'एकं द्वे करोतीति,' 'एकस्स द्विधाकरणं नाम कसनं, कसति भद्दे' ति 'एवं सामीति', 'कस्मिं पन ठाने ते पिता कसतीति' 'यत्थ सकिं गता न येन्तीति,' 'सकिं गतान न पच्चागमनट्ठानं नाम सुसानं, सुसानसन्तिके कसति भद्दे' ति, 'एवं सामीति,' 'भद्दे, अज्जेव एस्ससीति' स चे एस्सति न एस्सामि, नो चे एस्सति एस्सामीति 'भद्दे, पिता ते मञ्ञे नदीपारे कसति, उदके एन्ते न एस्ससि, अनेन्ते एस्ससीति' 'एवं सम्मीति,' एत्तकं अल्लापसल्लापं कत्वा अमरादेवी 'यागुं पिबिस्ससि सामीति', निमन्तेसि। महासत्तो पटिक्खिपनं नाम अमङ्गलन्ति चिन्तेत्वा 'आम, पिबिस्सामीति' आह सा यागुघटं ओतारेसि। महासत्तो 'सचे पातिं अधोवित्वा हत्थधोवनं अदत्वा व दस्सति एत्थेव नं पहाय गमिस्सामीति' चिन्तेसि। सा पन पातिया उदकं आहरित्वा हत्थधोवनं दत्वा तुच्छपातिं हत्थे अठपेत्वा भूमियं कत्वा घटं आलोलेत्वा यागुया पूरेसि, तत्थ पन सित्थानि मन्दानि, अथ नं महासत्तो आह, 'किं भद्दे अति बहला यागू' ति, 'उदकं न लद्धं सामीति' 'केदारेहि उदकं न लद्धं भविस्सति मञ्ञे' ति, सा 'एवं सामीति 'पितु यागुं ठपेत्वा बोधिसत्तस्स अदासि, सो पिवित्वा मुखं विक्खालेत्वा 'भद्दे, मयं तुम्हाकं गेहं गमिस्साम, मग्गं नो आचिक्खाति' आह, सा 'साधू' ति वत्वा तस्स मग्गं आचिक्खित्वा पितु यागुं गहेत्वा अगमासि।

सो ताय कथितमग्गेन तं गेहं गतो, अथ नं अमरादेविया माता दिस्वा व आसनं दत्वा 'यागुं वड्ढेमि सामीति' आह। 'अम्म,

कनिट्ठभगिनिया मे अमरादेविया थोका यागु दिन्ना' ति, सा 'धीतु मे अत्थाय आगतेन भवितब्बं' ति अञ्ञासि। महासत्तो तेसं दुग्गतभावं जानन्तोपि 'अम्म, अहं तुन्नवायो, अत्थि किञ्चि सिवितब्बन्' ति, 'सामि, अत्थि, मूलं पन नत्थीति'। 'अम्म, मूलेन कम्मं नत्थि, आनेथ, सिब्बिस्सामीति' सा जिण्णकानि पिलोतकानि आहरित्वा अदासि, बोधिसत्तो आहटाहटं निट्ठपेसि येव, पञ्ञवन्तानं किरिया नाम इज्झति। अथ नं 'अम्म, वीथिसभागानं आरोचेहीति' आह, सा सकलगामे आरोचेसि। महासत्तो तुन्नकम्मं कत्वा एकाहेनेव सहस्सं उप्पादेसि। महल्लिकापि स्स पातरासभत्तं पचित्वा दत्वा सायं 'तात-कित्तकं पचामीति' आह। 'अम्म, यत्तका इमस्मिं गेहे भुञ्जन्ति तेसं पमाणेना' ति, सा अनेकसूपब्यञ्जनं बहुभत्तं पचि।

अमरादेवी पि सायं सीसेन दारुकलापं उच्छंगेन पण्णं आदाय अरञ्ञतो आगन्त्वा पुरे द्वारे दारूनि निक्खिपित्वा पच्छिमद्वारेन गेहं पाविसि। पिता पनस्सा सायतरं आगमि। महासत्तो नानग्गर-सेपि भुञ्जि, इतरा मातापितरो भोजेत्वा पच्छा भुञ्जित्वा माता-पितुन्नं पादे धोवित्वा महासत्तस्स पादे धोवि। सो तं परिगण्हन्तो कतिपाहं तत्थेव वसि अथ नं वीमंसन्तो एकदिवसं आह: 'भद्दे अमरादेवि, अड्ढनाळिकमत्तं तण्डुलं गहेत्वा ततो मय्हं यागुञ्च पूवञ्च भत्तञ्च पचाहीति'। सा 'साधू' ति सम्पटिच्छित्वा ते तण्डुले कोट्टेत्वा मूलतण्डुलेहि यागुं मज्झिम तण्डुलेहि भत्तं कणिकाहि पूवं पचित्वा तदनुरूपंब्यञ्जनं सम्पादेत्वा महासत्तस्स सब्यञ्जनं यागुं अदासि। यागु मुखे ठपितमत्ताव रसहरणियो फरित्वा अट्ठासि। सो तस्सावीमंस-नत्थमेव 'भद्दे, पचितुं अजानन्ती किमत्थं मम तण्डुले नासेसीति'यागुं सह खेळेन निट्ठुभित्वा भूमियं पातेसि, सा अकुज्झित्वा व 'सचे यागु न सुन्दरा पूवं खाद सामीति' पूवं अदासि। तम्पि तथेव अकासि। भत्तेपि तथेव पटिपज्जित्वा 'त्वं पचितुं अजानन्ती मम सन्तकं किमत्थं

नासेसीति' कुद्धो विय तीणि पि एकतो मद्दित्वा तम्मा सीसतो पट्ठाय सकलसरीरं विलिम्पित्वा 'द्वारे निसीदाति' आह । सा अकुज्झित्वा व 'साधु सामीति' तथा अकासि । सो तस्सा निहतमानभावं ञत्वा 'भद्दे एहीति' आह । सा एकवचनेनेव आगता ।

महासत्तो पन आगच्छन्तो कहापणसहस्सेन सद्धिं एकं साटकं तम्बूल-पसिब्बके ठपेत्वा आगतो । अथ सो तं साटकं नीहरित्वा तस्सा हत्थे ठपेत्वा 'भद्दे तव सहायिकाहि सद्धिं नहायित्वा इमं साटकं निवासेत्वा एहीति' आह । सा तथा अकासि । पण्डितो उप्पादितधनञ्च आहटधनञ्च सब्बं तस्सा मातापितुन्नं दत्वा ते समस्सासेत्वा तं आदाय नगरमेव गन्त्वा वीमंसनत्थाय तं दोवारिकस्स गेहे निसीदापेत्वा दोवारिकभरियाय आचिक्खित्वा अत्तनो निवेसनं गन्त्वा पुरिसे आमन्तेत्वा 'असुकगेहे इत्थिं ठपेत्वा आगतो' म्हि, इमं सहस्सं आदाय गन्त्वा तं वीमंसथा' ति सहस्सं दत्वा पेसेसि । ते तथा करिंसु । सा 'इमं मम सामिकस्स पादरजं न अग्घताति न' इच्छि । ते गन्त्वा पण्डितस्स आरोचेसुं । पुनपि यावततियं पेसेत्वा चतुत्थे वारे 'तेन हि तं हत्थे गहेत्वा कड्ढन्ता आनेथा' ति आह । ते तथा करिंसु । सा महासत्तं महासम्पत्तियं ठितं न सञ्जानि, ओलोकेत्वा च पन हसित्वेव रोदि च । सा उभिन्नम्पि कारणं पुच्छि । अथ नं सा एवमाह सामि अहं हसमाना तवसम्पत्तिं ओलोकेत्वा 'अयं सम्पत्ति न अकारणेन लद्धा, पुरिमभवे पन कुसलं कत्वा लद्धा भविस्ससि, अहो पुञ्ञानं फलं नामाति हसिं, रोदमाना पन इदानि परस्स रक्खितगोपितवत्थुम्हि अपरज्झित्वा निरयं गमिस्ससीति तयि कारुञ्ञेन रोदिन्' ति । सो तं वीमंसित्वा सुद्धभावं ञत्वा 'गच्छथ, नं तत्थेव नेथा' ति वत्वा पेसेत्वा पुन तुन्नवायवेसं गहेत्वा गन्त्वा ताय सद्धिं तं रत्तिं वसित्वा पुनदिवसे पातो व राजकुलं पविसित्वा उदुम्बरा देविया आरोचेसि । सा रञ्ञो आरोचेत्वा अमरादेविं सब्बालंकारेहि अलंकरित्वा महायोग्गे निसीदा-

पेत्वा महन्तेन सक्कारेन महासत्तस्स गेहं आनेत्वा मङ्गलं कारेसि । राजा बोधिसत्तस्स सहस्समूलं पण्णाकारं पेसेसि । दोवारिके आदिं कत्वा सकलनगरवासिनो पण्णाकारे पहिणिंसु । अमरादेवी रञ्ञा पहितं पण्णाकारं द्विधा भिन्दित्वा एकं कोट्ठासं रञ्ञं पेसेसि । एतेनुपायेन सकलनगरवासीनम्पि पण्णाकारं पेसेत्वा नगरं संगण्हि । ततो पट्ठाय महासत्तो ताय सद्धिं समग्गवासं वसन्तो रञ्ञो अत्थञ्च धम्मञ्च अनुसासि ।

महोसधस्स विनिच्छयो

एका इत्थी पुत्तं आदाय मुखधोवनत्थाय पण्डितस्स पोक्खरणिं गन्त्वा पुत्तं नहापेत्वा अत्तनो साटके निसीदापेत्वा मुखं धोवित्वा नहायितुं ओतरि । तस्मिं खणे एका यक्खिनी नं दारकं दिस्वा खादितुकामा हुत्वा इत्थिवेसं गहेत्वा 'सहायिके, सोभति वतायं दारको, तवेसो पुत्तो' ति पुच्छित्वा 'आम, अम्मा' ति वुत्ते 'पायेमि नन्' ति वत्वा 'पायेही' ति वुत्ता तं गहेत्वा थोकं कीळापेत्वा तं आदाय पलायितुं आरभि । इतरा तं दिस्वा धावित्वा 'कुहिं मे पुत्तं नेसीं' ति गण्हि । यक्खिनी 'कुतो तया पुत्तो लद्धो, ममेसो पुत्तो' ति आह । ता कलहं करोन्तियो सालद्वारेन गच्छन्ति । पण्डितो कलहसद्दं सुत्वा ता पक्कोसित्वा 'किमेतन' ति पुच्छित्वा अट्टं सुत्वा अक्खीनं अनिमिसताय चेव रत्तताय च यक्खिनिं यक्खिनीति ञत्वापि 'मम विनिच्छये ठस्सथा' ति वत्वा 'आम ठस्सामा' ति वुत्ते लेखं कड्ढित्वा लेखामध्ये दारकं निपज्जापेत्वा, यक्खिनिया हत्थेसु मातरा पादेसु गाहापेत्वा 'द्वेपि आकड्ढित्वा गण्हथ, कड्ढितुं सक्कोन्तिया एव पुत्तो' ति आह । ता उभोपि कड्ढिंसु । दारको कड्ढियमानो दुक्खप्पत्तो हुत्वा विरवि । माता हदयेन फलितेन विय पुत्तं मोचेत्वा रोदमाना अट्ठासि । पण्डितो महाजनं पुच्छि 'दारके मातुहदयं मुदुकं होति उदाहु अमातुहदयन्' ति । 'मातुहदयं पण्डिता' ति । 'इदानि किंमेतं दारकं गहेत्वा ठिता माता होति विस-ज्जेत्वा ठिता' ति । 'विसज्जेत्वा ठिता पण्डिता' ति । 'इमं पन दारक-

चोरिं तुम्हे जानाथा' ति । 'न जानाम पण्डिता' ति । 'यक्खिनी एसा, दारकं खादितुं गण्हि' ति । 'कथं जानासि पण्डिता' ति । 'अक्खीनं अनिमिसताय चेव रत्तताय च छायाय अभावेन च निरासंकताय च निक्करुणताय चा' ति । अथ नं पुच्छि 'कासि त्वन्' ति । 'यक्खिनिम्हि सामी' ति । 'कस्मा इमं दारकं गण्ही' ति । 'खादितुं सामी' ति । 'अन्धबाले, पुब्बेपि पापकं कत्वा यक्खिनी जातासि इदानि पुनपि पापं करोसि, अहो अन्धबालासी' ति ओवदित्वा पञ्चसु सीलेसु पतिट्ठापेत्वा उय्योजेसि । दारकमाता 'चिरंजीव सामी' ति पण्डितं थोमेत्वा पुत्तं आदाय पक्कामि ।

चुल्लकसेट्ठि

अतीते कासि रट्ठे बाराणसियं ब्रह्मदत्त रज्जं कारेन्ते बोधिसत्तो सेट्ठिकुले निब्बत्तित्वा वयप्पत्तो सेट्ठिट्ठानं लभित्वा चुल्लकसेट्ठि नाम अहोसि सो पण्डितो ब्यत्तो सब्बनिमित्तानि जानाति । सो एकदिवस राजूपट्ठानं गच्छन्तो अन्तरवीथियं मतमूसिकं दिस्वा तं खणे नक्खत्तं समानेत्वा इदमाह: 'सक्का चक्खुमता कुलपुत्तेन इमं उन्दुरं गहेत्वा दाराभरणं वा कातुं कम्मन्ते च पयोजेतुन्' ति । अञ्ञतरो दुग्गतकुलपुत्तो तं सेट्ठिस्स वचनं सुत्वा 'नायं अजानित्वा कथेस्सती' ति, मूसिकं गहेत्वा एकस्मिं आपणे बिडालस्सत्थाय दत्वा काकणिकं लभि । ताय काकणिकाय फाणितं गहेत्वा एकेन कुटेन पानीयं गण्हि । सो अरञ्ञतो आगच्छन्ते मालाकारे दिस्वा थोकं थोकं फाणितखण्डं दत्वा उलुंकेन पानीयं अदासि । ते तस्स एकेकं पुप्फमुट्ठिं अदंसु । सो तेन पुप्फमूलेन पुनदिवसेपि फाणितञ्च पानीयघटञ्च गहेत्वा पुप्फाराममेव गतो । तस्स तं दिवसं मालकारा अड्ढाचितके पुप्फगुच्छे दत्वा अगमंसु । सो नचिरस्सेव इमिना उपायेन अट्ठकहापणे लभि ।

पुन एकस्मिं वातवुट्ठिदिवसे राजुय्याने बहू सुक्खदण्डका च साखा च पलासं च वातेन पतितं होति । उय्यानपालो छड्डेतुं उपायं न

पस्सति । सो तत्थ गन्त्वा 'स चे इमानि दारुपण्णानि मय्हं दस्ससि अहन्ते इमानि सब्बानि नीहरिस्सामी' ति उय्यानपालमाह । सो 'गण्ह अय्या' ति सम्पटिच्छि । चुल्लन्तेवासिको दारकानं केलिमण्डलं गन्त्वा फाणितं दत्वा मुहुत्तेन सब्बानि दारुपण्णानि नीहरापेत्वा उय्यानद्वारे रासिं कारेसि । तदा राजकुम्भकारो राजकुलानं भाजनानं पचनत्थाय दारूनि परियेसमानो उय्यानद्वारे तानि दिस्वा तस्स हत्थतो विकिणित्वा गण्हि । तं दिवसं चुल्लन्तेवासिको दारुविक्कयेन सोळस कहापणे चाटिआदीनि च पञ्च भाजनानि लभि । सो चतुवीसतिया कहापणेसु जातेसु 'अत्थि अयं उपायो मय्हन्' ति नगरद्वारतो अविदूरट्ठाने एकं पानीयचाटिं ठपेत्वा पञ्चसते तिणहारके पानीयेन उपट्ठहि । ते आहंसुः 'त्वं सम्म अम्हाकं बहूपकारो, किन्ते करोमा' ति । सो 'मय्हं किच्चे उप्पन्ने करिस्सथा' ति वत्वा इतो चितो च विचरन्तो थलपथकम्मिकेन च जलपथकम्मिकेन च सद्धिं मित्तसन्थवं अकासि । तस्स थलपथकम्मिको 'स्वे इमं नगरं अस्सवाणिजको पञ्च अस्ससतानि गहेत्वा आगमिस्सती' ति आचिक्खि । सो तस्स वचनं सुत्वा तिणहारके आह 'अज्ज मय्हं एकेकं तिणकलापं देथ, मया च तिणे अविक्कीते अत्तनो तिणं मा विक्किणथा' ति । ते 'साधू' ति सम्पटिच्छित्वा पञ्च तिणकलापसतानि आहरित्वा तस्स घरे पातयिंसु । अस्सवाणिजो सकलनगरे अस्सानं तिणं अलभित्वा तस्स सहस्सं दत्वा तं तिणं गण्हि । ततो कतिपाहच्चयेन तस्स जलपथकम्मिकसहायको आरोचेसिः 'पट्टनं महानावा आगता' ति । सो 'अत्थि अयं उपायो' ति अट्ठहि कहापणेहि सब्बपरिवारसम्पन्नं तावकालिकं रथं गहेत्वा महन्तेन यसेन नावा पट्टनं गन्त्वा एकं अङ्गुलिमुद्दिकं नाथ वा सच्चकारं दत्वा अविदूरट्ठाने साणिं परिक्खिपापेत्वा निसिन्नो पुरिसे आणापेसिः 'बाहिरतो वाणिजेसु आगतेसु ततियेन पाटिहारेन आरोचेथा' ति । 'नावा आगता' ति सुत्वा बाराणसितो सतमत्ता वाणिजा 'भण्डं गण्हामा' ति अगमिंसु ।

'भण्डं तुम्हे न लभिस्सथ, असुकट्ठाने नाम महावाणिजेन सच्चकारो दिन्नो' ति। ते तं सुत्वा तस्स सन्तिकं आगता। पादमूलिकपुरिसा पुरिस सञ्ञावसेन ततियेन पाटिहारेन तेसं आगतभावं आरोचेसुं। ते सतमत्तापि वाणिजा एकेकं सहस्सं दत्वा तेन सद्धिं नावाय पत्तिका हुत्वा पुन एकेकं सहस्सं दत्वा पत्तिं विस्सज्जापेत्वा भण्डं अत्तनो सन्तकं अकंसु। चुल्लन्ते वासिको द्वे सतसहस्सानि गण्हित्वा वाराणसिं आगन्त्वा 'कतञ्ञुना भवितुं वट्टती' ति एकं सतसहस्सं गाहापेत्वा चुल्लकसेट्ठिस्स समीपं गतो। अथ नं सेट्ठि 'किन्ते तात कत्वा इदं धनं लद्धन्' ति पुच्छि। सो 'तुम्हे कथितउपाये ठत्वा चतुमासब्भन्तरे नेव लद्धन्' ति मत मूसिकं आदिं कत्वा सब्बं वत्थुं कथेसि। चुल्लकमहासेट्ठि तस्स वचनं सुत्वा 'न दानि एवरूपं दारकं परसन्तकं कातुं वट्टती' ति वयप्पत्तं धीतरं दत्वा सकलकुटुम्बस्स सामिकं अकासि। सो सेट्ठिनो अच्चयेन तस्मिं नगरे सेट्ठिट्ठानं लभि। बोधिसत्तोपि यथाकम्मं अगमासि। सम्मासम्बुद्धोपि इमं धम्मदेसनं कथेत्वा अभिसम्बुद्धो व इमं गाथं कथेसि—

अप्पकेन पि मेधावी पाभतेन विचक्खणो;
समुट्ठापेति अत्तानं अणुं अग्गीव सन्धमन्' ति।

शब्द-कोष

अ

अकतञ्ञू—अकृतज्ञ, उपकार न माननेवाला।

अगतिगमनं—कुमार्ग से चलना।

अग्गमहेसी—अग्रमहिषी, प्रधान पट्टरानी।

अट्ट—अर्थ, मुकद्दमा।

अतिवत्तति—अतिवर्तते, अतिक्रमण करता है।

अनवज्ज—अनवद्य, दोष-रहित।

अनुपुब्बेन—आनुपूर्व्येण, क्रमशः।

अज्झोत्तरित्वा—अध्यवस्तीर्य, तीर्ण करके।

अन्तमसो—अन्ततः।

अरिय—आर्य, श्रेष्ठ।

असुक—अमुक।

अहोसि—अभूत्, हुआ।

आ

आदिच्चो—आदित्यः, सूर्य।

आचरिय—आचार्यः।

आणा—आज्ञा।

आरक्ख—आरक्ष, रक्षा।

आवुध—आयुध, शस्त्र।

इ

इत्थि—स्त्री।

इस्सर—ईश्वर।

इदानि—इदानीम्, इस समय।

इध—इह, यहाँ।

इद्धि—ऋद्धि।

उ

उक्कमन—उत्क्रमण, निकलना।

उट्ठान—उत्थान, उठना।

उत्तमङ्ग—उत्तमाङ्ग, सिर।

उन्दुर—इन्दुर, मूषक।

उप्पलं—उत्पलम्, कमल

ऊ

ऊका—यूका, जूं।

ए

एकमन्तं—एकान्ते, एक किनारे।

एतादिस—एतादृश, इस प्रकार का।

एत्तक—एतावत्, इतना।

ओ

ओकास—अवकाश, स्थान।

ओपरज्ज—यौवराज्य।

ओवाद—अववाद, उपदेश।

ओहीनक—अवहीनक, बचे हुए।

क

कत—कृत, किया गया।

कतिपाहं—कतिपयाहम्, कुछ दिन।

कम्मार—कर्मार, लोहार।

कसि—कृषि।

कातब्बो—कर्तव्यः, करने योग्य ।

कारुञ्ज—कारुण्य, दया ।

कालमकासि—कालम् अकार्षीत्, मर गई ।

कित्तक—कियत्, कितना ।

किरिया—क्रिया ।

कुच्छिस्मि—कुक्षौ, कोख में ।

कुज्झति—क्रुध्यति, क्रोध करता है ।

कोचि—कश्चित्, कोई ।

कोसिय—कौशिक, उलूक ।

ख

खत्तियो—क्षत्रियः ।

खन्ति—क्षान्ति, क्षमा ।

खन्धावार—स्कन्धावार, सेना ।

खज्जोपनक—खद्योतनक, जुगनू कीड़ा ।

खिप्पं—क्षिप्रम्, शीघ्र ।

खीयति—क्षीयते, क्षीण होता है ।

खुद्द—क्षुद्र, छोटा ।

ग

गण्हि—अग्रहीत्, ग्रहण किया ।

गन्त्वा—गत्वा, जाकर ।

गब्भो—गर्भः ।

गवेसितुं—गवेषितुं, ढूँढने के लिये ।

गाहापेत्वा—ग्राहयित्वा, ग्रहण कराकर ।

घ

घातापेति—घातयति, वध कराता है ।

घोसेति—घोषयति, घोषणा कराता है ।

च

चतूसु—चतुर्षु, चार में।
चागो—त्यागः।
चिएण—चीर्ण, विचरण किया गया।

छ

छट्ठम—षष्ठ, छठा।
छड्डापेति—छर्दयति, छुड़ाता है।
छत्त—छत्र।

ज

ञातिसुहज्जो—ज्ञातिसुहृदो, बंधु-मित्र।
जानापेत्वा—ज्ञापयित्वा, जनाकर।
जिने—जयेत्, जीते।
जिनाति—जयति, जीतता है।

झ

झायति—क्षीयते, नष्ट होता है।
झायिनो—ध्यायिनः, ध्यान करनेवाले का।

ञ

ञत्वा—ज्ञात्वा, जानकर।
ञाति—ज्ञाति, बंधु।

ठ

ठत्वा—स्थित्वा, ठहरकर।
ठपित—स्थापित, रक्खा हुआ।
ठपेत्वा—स्थापयित्वा, रखकर।

त

तज्जेसि—धमकाया।
तिकिच्छक—चिकित्सक, वैद्य।

तिविधग्गि—त्रिविधाग्नि, तीन प्रकार की अग्नि।

तंखणे—तत्क्षणे, उसी समय।

थ

थम्भ—स्तंभ।

थेरो—स्थविरो, वृद्ध।

द

द्वादसवस्सच्चयेन—द्वादशवर्षात्ययेन, बारह वर्ष के बाद।

दिन्नं—दत्तं, दिया गया।

दुग्गत—दुर्गत, दुर्गति-ग्रस्त।

दुम्मेधानं—दुर्मेधसाम्, दुर्बुद्धियों का।

ध

धीता—दुहिता, लड़की।

धूमकाले—धूम्रकाले, मरण समय में।

न

निप्फत्तिं—निष्पत्तिम्, कुशलता।

निसिन्नकाले—निषण्णकाले, बैठने के समय।

निक्खमिसु—निरक्रमिषुः, निकले।

नेमित्तिके—नैमित्तिकान्, निमित्त जाननेवालों को (ज्योतिषी आदि)।

प

पटिञ्ञं—प्रतिज्ञा।

पटिपक्ख—प्रतिपक्ष, विपरीत।

परियोसिते—पर्यवसिते, समाप्त होने पर।

पुग्गल—पुद्गल, जीव।

पातो—प्रातः, सबेरे।

पञ्ञा—प्रज्ञा, बुद्धि।

पहाय—प्रहाय, त्यागकर।

फ

फलितं—पलितं, पका हुआ ।

ब

बोधेति—बोधयति, बोध कराता है ।

भ

भातिकेहि सद्धिं—भ्रातृकैः सार्धम्, भाइयों के साथ।
भिज्जनाकारप्पयत्ता—भेदनाकारप्राप्ता, फूटने योग्य ।

म

मग्गो—मार्गः ।
मच्चु—मृत्युः ।
मच्छरी—मत्सरी ।
मज्झिम—मध्यम ।
मनापा—मनआप्या—हृदयंगम ।
मारापेत्वा—मारयित्वा, वध कराके ।
मुसा—मृषा ।
मेत्तं—मैत्रं ।

य

यसं—यशः ।
याचि—अयाचिष्ट, याचना की ।

र

रक्खा—रक्षा ।
रट्ठं—राष्ट्रम् ।

ल

लहु—लघु, क्षुद्र, हलका ।
लद्धं—लब्धम्, प्राप्त हुआ ।

खामकस्स—तुच्छ, क्षुद्र ।

लुद्द—रुद्र, भयंकर ।

लुद्दक—लुब्धक, बहेलिया ।

व

वस्सिकी—(देशी शब्द), चमेली ।

विरियं—वीर्यम् ।

विनिच्छिनन्ति—विनिश्चिन्वन्ति, विनिश्चय करते हैं ।

विजायि—व्यजनिष्ट, उत्पन्न किया ।

विलुम्पापेति—विलोपयति, नाश कराता है ।

व्यत्तो—व्यक्तः, स्पष्ट, पंडित के अर्थ में भी इसका प्रयोग पाया जाता है ।

स

सक्को—शक्रः, इंद्र ।

सङ्खारा—संस्कार ।

सचे—चेत्, यदि ।

सन्थव—संस्तव, परिचय ।

सरीरकिच्चं—शरीरकृत्यं, शरीरसंस्कार ।

सुक्ख—शुष्क, सूखा ।

सुट्ठु—सुष्ठु, सुंदर ।

सिया—स्यात्, हो ।

सेय्यो—श्रेयः, कल्याणकर ।

संवच्छर—संवत्सर, वर्ष ।

सञ्ञा—संज्ञा ।

सञ्ञोग—संयोग ।

सत्था—शास्ता, शासन करनेवाला, यह शब्द बुद्ध भगवान् के लिये आया है ।

सद्दहानः—श्रद्धानः, श्रद्धा करनेवाला ।

सावको—श्रावकः, बौद्ध-धर्म में प्रविष्ट ।

सावत्थियं—श्रावस्त्यां, श्रावस्ती नाम की नगरी में ।

सिरिगब्भं—श्रीगर्भम्, राजा का शयन-गृह ।

सेट्ठी—श्रेष्ठी, सेठ ।

सेय्यथा—तद्यथा ।

ह

हञ्ञति—हन्यते, मारा जाता है ।

हिरि—ह्रीः, लज्जा ।

हेट्ठा—नीचे ।

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२९	१९	व्ह	रह
८०	२४	लट्	लृट्